Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्याण

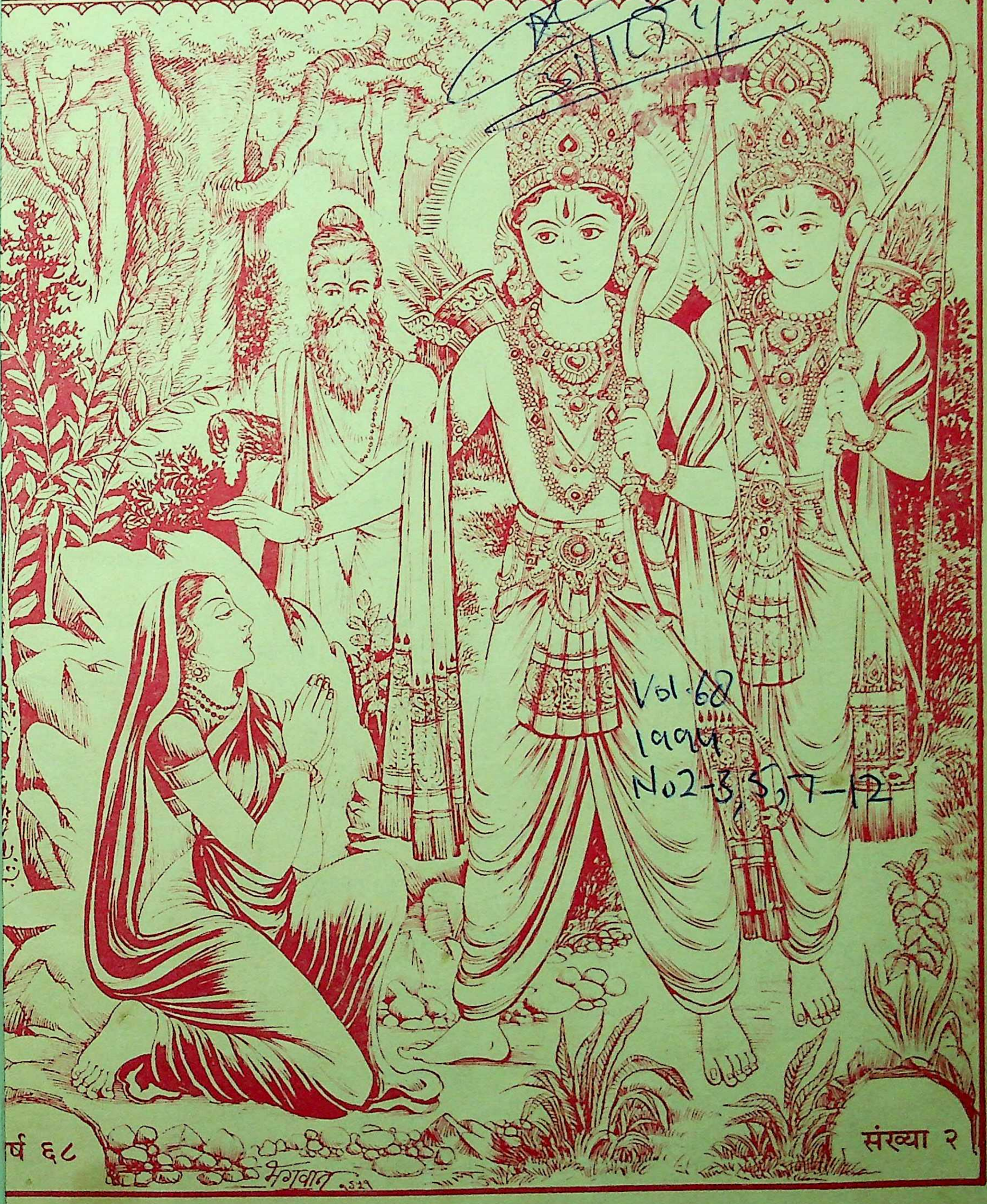

वर्ष ६८ संख्या २

(परिशिष्टाङ्क)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥

(संस्करण २,०५,०००)

विषय-सूची

कल्याण, सौर फाल्गुन, वि° सं° २०५०, श्रीकृष्ण-सं° ५२१९, फरवरी १९९४ ई°

विषय	पृष्ठ-संख्या
१-भगवान् श्रीरामद्वारा श्रीरामेश्वरका माहात्म्य-निरूपण	४०९
२-भगवान् सीतारामके विभिन्न स्वरूपोंका ध्यान (श्रीशिवदत्तजी उपाध्याय)	४१०
३-ऐसो को उदार जग माहीं	४१३
४-श्रीरामभद्र पूर्णावतार हैं (अनन्तश्रीविभूषित द्वारका-शारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीस्वरूपानन्द सरस्वतीजी महाराज)	४१४
५-श्रीरामका वास्तविक स्वरूप और उनकी भक्ति (स्वामी श्रीविज्ञानानन्दजी सरस्वती)	४१८
६-रामभक्ति तथा रामनाम-साधना (श्रीरामकृष्ण रामानुजदासजी 'श्रीसंतजी महाराज')	४२०
७-भगवान् श्रीसीतारामजीकी युगल उपासना (स्वामी श्रीसीतारामशरणजी महाराज, लक्ष्मण-किलाधीश)	४२२
८-श्रीमानस-पुरश्चरण-यन्त्र (परमादरणीय श्रीजानकीशरणजी महाराज 'मधुकर')	४२४
९-श्रीरामकवचम्	४२८
१०-भगवान् श्रीरामका नित्यधाम—साकेत (डॉ° श्रीस्वर्णकिरणजी)	४३१
११-स्थितप्रज्ञ कर्मयोगी श्रीराम (डॉ° श्रीदादूरामजी शर्मा)	४३४
१२-राम-धाम—अयोध्या (स्वामी श्रीपरमहंसजी महाराज)	४३६
'रामायन सत कोटि अपारा'—	
१३-पाञ्चरात्र आगमोंमें भगवान् श्रीसीताराम	४३८
१४-वाल्मीकिरामायणकी कथा (ला° बि° मि°)	४४०
श्रीरामभक्त-गाथा—	
१५-जिसका है राम रक्षक,उसका है कौन भक्षक ? (गोलोकवासी भक्त श्रीरामशरणदासजी)	४४४
१६-सखा सुग्रीव	४४५
१७-मनु और शतरूपाकी राम-भक्ति (श्रीरामनरेशजी दीक्षित, शास्त्री)	४४७
१८-संत श्रीनामदेवजीकी रामभक्ति (श्रीशंकरलाल नामदेवजी, शिक्षक, एम्° ए°, साहित्यरत्न)	४४८
१९-भगवान्के चरणोंका आश्रय सब भय-शोकादिका नाशक है	४५०
२०-मीराके राम (डॉ° श्रीपद्माकर जगन्नाथ हरिदासजी, एम्° ए°, पी-एच्° डी°, बी° एस्-सी°, बी° जी° एल्°, एम्° बी° बी° एस्°, डी° टी° डी°)	४५१
२१-रामकी लीला राम ही जानें [कविता] (श्रीरमणजी भजनानन्दी)	४५२
२२-रामभक्त एक अंग्रेज कमिश्नर (श्रीअम्बादास सी°, बागूल)	४५३
२३-भक्त रामदास (श्रीलक्ष्मणरावजी जोशी, एम्° ए°)	४५४
२४-ऐसे राम दीन-हितकारी	४५६

चित्र-सूची

१-अहल्या उद्धार	(इकरंगा)	आवरण-पृष्ठ
२-भगवान् श्रीरामका रामेश्वर-पूजन	(रंगीन)	मुख-पृष्ठ

इस अङ्कका मूल्य ३ रु°
विदेशमें—US$0.25
वार्षिक शुल्क (भारतमें)
डाक-व्ययसहित ६५ रु°
(सजिल्द ७० रु°)
विदेशमें—US$10

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय ॥
जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय ॥
जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते ॥

पंद्रह वर्षीय शुल्क
डाक-व्ययसहित
(भारतमें) ५०० रु°
(सजिल्द ६०० रु°)

संस्थापक—ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका
आदिसम्पादक—नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार
सम्पादक—राधेश्याम खेमका
केशोराम अग्रवालद्वारा गोविन्दभवन-कार्यालयके लिये गीताप्रेस, गोरखपुरसे मुद्रित तथा प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् श्रीरामका श्रीरामेश्वर-पूजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

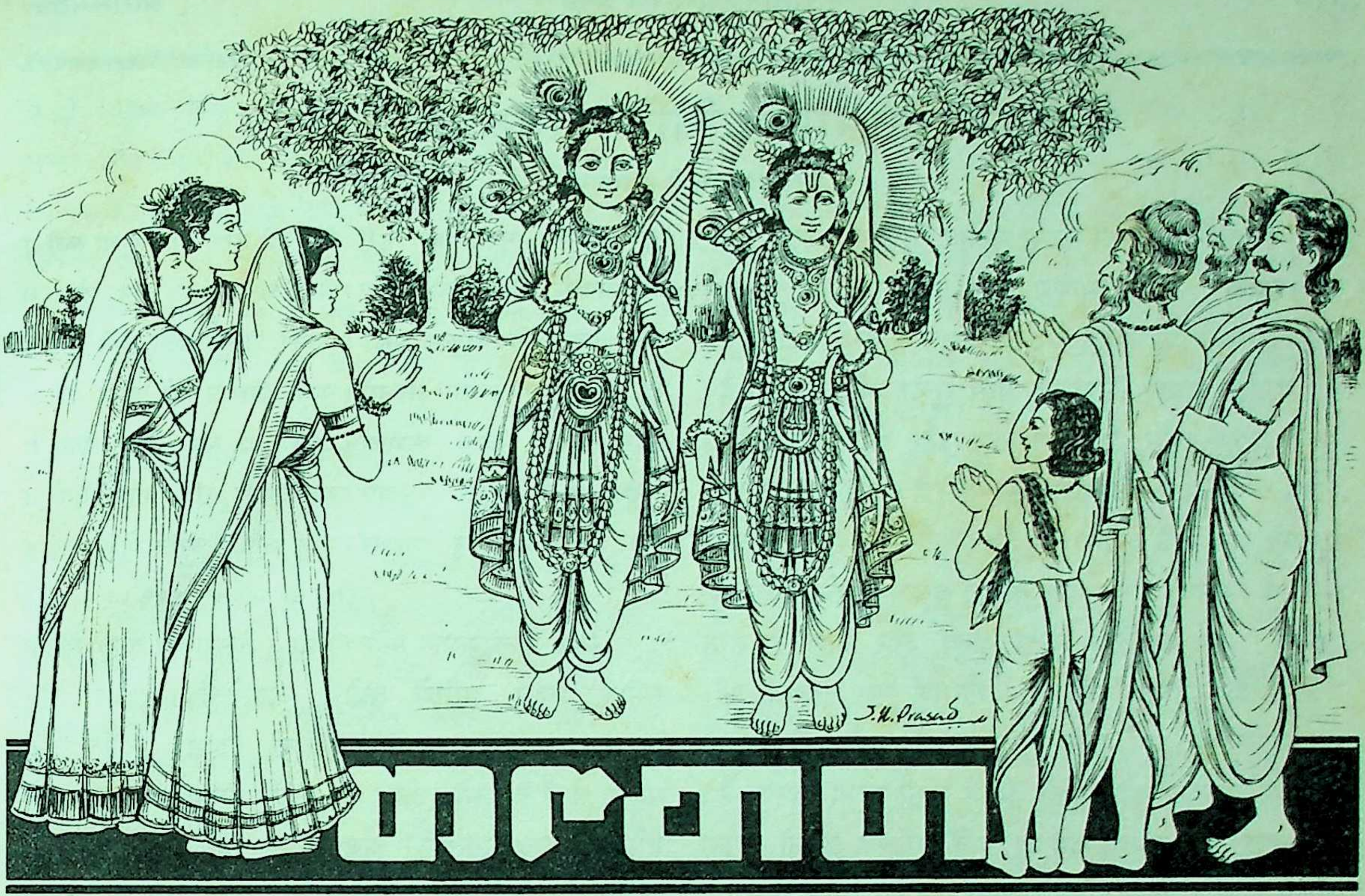

कल्याण

यः पृथिवीभरवारणाय दिविजैः सम्प्रार्थितश्चिन्मयः संजातः पृथिवीतले रविकुले मायामनुष्योऽव्ययः ।
निश्चक्रं हतराक्षसः पुनरगाद् ब्रह्मत्वमाद्यं स्थिरां कीर्तिं पापहरां विधाय जगतां तं जानकीशं भजे ॥

वर्ष ६८ } गोरखपुर, सौर फाल्गुन, वि॰सं॰ २०५०, श्रीकृष्ण-सं॰ ५२१९, फरवरी १९९४ ई॰ { संख्या २ / पूर्ण संख्या ८०७

भगवान् श्रीरामद्वारा श्रीरामेश्वरका माहात्म्य-निरूपण

परम रम्य उत्तम यह धरनी । महिमा अमित जाइ नहिं बरनी ॥
करिहउँ इहाँ संभु थापना । मोरे हृदयँ परम कलपना ॥
सुनि कपीस बहु दूत पठाए । मुनिबर सकल बोलि लै आए ॥
लिंग थापि बिधिवत करि पूजा । सिव समान प्रिय मोहि न दूजा ॥
सिव द्रोही मम भगत कहावा । सो नर सपनेहुँ मोहि न पावा ॥
संकर बिमुख भगति चह मोरी । सो नारकी मूढ़ मति थोरी ॥
संकरप्रिय मम द्रोही सिव द्रोही मम दास ।
ते नर करहिं कलप भरि घोर नरक महुँ बास ॥
जे रामेस्वर दरसनु करिहहिं । ते तनु तजि मम लोक सिधरिहहिं ॥
जो गंगाजलु आनि चढ़ाइहि । सो साजुज्य मुक्ति नर पाइहि ॥
होइ अकाम जो छल तजि सेइहि । भगति मोरि तेहि संकर देइहि ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् सीतारामके विभिन्न स्वरूपोंका ध्यान

(श्रीशिवदत्तजी उपाध्याय)

मन्दाकिनीके सुन्दर तटपर मनोहर चित्रकूट पर्वतके ऊपर कल्पवृक्षके नीचे रमणीय स्फटिक-शिलापर भगवान् श्रीसीतारामजी विराजमान हैं। श्रीलक्ष्मणजी दूरसे पहरा दे रहे हैं। भगवान् नखसे शिखातक परम सुन्दर और दर्शनीय हैं। सुन्दर श्याम-शरीर है। वक्षःस्थल और कंधे विशाल हैं। गलेमें वनमाला है। वल्कल-वस्त्र पहने हैं। मुनियोंका वेश है, नेत्र बड़े ही मनोहर कृपाके समुद्र हैं। जटाओंका मुकुट अत्यन्त सुन्दर है। मनोहर मुखमण्डल करोड़ों चन्द्रमाओंको मलिन कर रहा है। कर-कमलोंमें सुन्दर धनुष और बाण है तथा कटि-प्रदेशमें तरकश बँधा है। गौरवर्ण परम तेजस्वी श्रीलक्ष्मणजी भी इसी भाँति सुशोभित हैं। और भी अनेकों प्रकारके भगवान् श्रीरामजीके ध्यान करने योग्य स्वरूप हैं। यहाँ कुछ ध्यान-स्वरूप दिये जा रहे हैं। साधक अपनी-अपनी रुचिके अनुसार किसी भी स्वरूपका ध्यान कर सकते हैं—

१—श्रीसीतारामका ध्यान

कालाम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं वीरासनाध्यासितं
मुद्रां ज्ञानमयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि।
सीतां पार्श्वगतां सरोरुहकरां विद्युन्निभां राघवं
पश्यन्तीं मुकुटाङ्गदादिविविधाकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे॥

(शारदातिलक १५। ८४)

भगवान् श्रीरामकी देहकान्ति मेघके समान श्याम-वर्ण है। वे वीरासनसे बैठे हुए हैं। उनके एक हाथमें ज्ञानमुद्रा है और दूसरा बायाँ हाथ जानुपर रखा हुआ है। उनके वामपार्श्वमें पद्महस्ता एवं विद्युत्के समान तेजोमयी सीतादेवी विराजित हैं और वे श्रीरामकी ओर देख रही हैं। श्रीरामचन्द्रके मस्तकपर रत्नमुकुट है और बाजूबंद आदि विविध रत्नमण्डित आभूषणोंसे शरीर प्रकाशित हो रहा है—ऐसे श्रीसीतारामका हम ध्यान करते हैं।

२—श्रीरामके बाल-रूपका ध्यान

काम कोटि छबि स्याम सरीरा। नील कंज बारिद गंभीरा॥
अरुन चरन पंकज नख जोती। कमल दलन्हि बैठे जनु मोती॥
रेख कुलिस ध्वज अंकुस सोहे। नूपुर धुनि सुनि मुनि मन मोहे॥
कटि किंकिनी उदर त्रय रेखा। नाभि गभीर जान जेहिं देखा॥
भुज बिसाल भूषन जुत भूरी। हियँ हरि नख अति सोभा रूरी॥
उर मनिहार पदिक की सोभा। बिप्र चरन देखत मन लोभा॥
कंबु कंठ अति चिबुक सुहाई। आनन अमित मदन छबि छाई॥
दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे। नासा तिलक को बरनै पारे॥
सुंदर श्रवन सुचारु कपोला। अति प्रिय मधुर तोतरे बोला॥
चिक्कन कच कुंचित गभुआरे। बहु प्रकार रचि मातु सँवारे॥
पीत झगुलिआ तनु पहिराई। जानु पानि बिचरनि मोहि भाई॥

(रा॰ च॰ मा॰ १। १९९। १—११)

उनके नील कमल और गम्भीर (जलसे भरे हुए) मेघके समान श्याम शरीरमें करोड़ों कामदेवोंकी शोभा है। लाल-लाल चरण-कमलोंके नखोंकी [शुभ्र] ज्योति ऐसी मालूम होती है, जैसे [लाल] कमलके पत्तोंपर मोती स्थिर हो गये हों। [चरणतलोंमें] वज्र, ध्वजा और अङ्कुशके चिह्न शोभित हैं। नूपुर (पैंजनी) की ध्वनि सुनकर मुनियोंका भी मन मोहित हो जाता है। कमरमें करधनी और पेटपर तीन रेखाएँ (त्रिवली) हैं। नाभिकी गम्भीरताको तो वही जानते हैं जिन्होंने उसे देखा है। बहुत-से आभूषणोंसे सुशोभित विशाल भुजाएँ हैं। हृदयपर बाघके नखकी बहुत ही निराली छटा है। छातीपर रत्नोंसे युक्त मणियोंके हारकी शोभा और ब्राह्मण (भृगु) के चरण-चिह्नको देखते ही मन लुभा जाता है। कण्ठ शंखके समान (उतार-चढ़ाववाला तीन रेखाओंसे सुशोभित) है और ठोड़ी बहुत ही सुन्दर है। मुखपर असंख्य कामदेवोंकी छटा छा रही है। दो-दो सुन्दर दँतुलिया हैं। लाल-लाल होठ हैं, नासिका और तिलक [के सौन्दर्य] का तो वर्णन ही कौन कर सकता है। सुन्दर कान और बहुत ही सुन्दर गाल हैं। मधुर तोतले शब्द बहुत ही प्यारे लगते हैं। जन्मके समयसे रखे हुए चिकने और घुँघराले बाल हैं। जिनको माताने बहुत प्रकारसे बनाकर सँवार दिया है, शरीरपर पीली झँगुली पहनायी हुई है। उनका घुटना और हाथोंके बल चलना मुझे बहुत ही प्यारा लगता है।

३—श्रीराम-लक्ष्मणके किशोर-रूपका ध्यान

पीत बसन परिकर कटि भाथा। चारु चाप सर सोहत हाथा॥
तन अनुहरत सुचंदन खोरी। स्यामल गौर मनोहर जोरी॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केहरि कंधर बाहु बिसाला। उर अति रुचिर नागमनि माला॥
सुभग सोन सरसीरुह लोचन। बदन मयंक तापत्रय मोचन॥
कानन्हि कनक फूल छबि देहीं। चितवत चितहि चोरि जनु लेहीं॥
चितवनि चारु भृकुटि बर बाँकी। तिलक रेख सोभा जनु चाँकी॥
रुचिर चौतनीं सुभग सिर मेचक कुंचित केस।
नख सिख सुंदर बंधु दोउ सोभा सकल सुदेस॥

(रा० च० मा० १। २१९। ३—८; २१९)

[दोनों भाइयोंके] पीले रंगके वस्त्र हैं, कमरके [पीले] दुपट्टोंमें तरकश बँधे हैं। हाथोंमें सुन्दर धनुष-बाण सुशोभित हैं। [श्याम और गौर-वर्णके] शरीरोंके अनुकूल (अर्थात् जिसपर जिस रंगका चन्दन अधिक फबे उसपर उसी रंगके) सुन्दर चन्दनकी खौर लगी है। साँवरे और गोरे [रंग] की मनोहर जोड़ी है। सिंहके समान (पुष्ट) गर्दन (गलेका पिछला भाग) है; विशाल भुजाएँ हैं। [चौड़ी] छातीपर अत्यन्त सुन्दर गजमुक्ताकी माला है। सुन्दर लाल कमलके समान नेत्र हैं। तीनों तापोंसे छुड़ानेवाला चन्द्रमाके समान मुख है। कानोंमें सोनेके कर्णफूल [अत्यन्त] शोभा दे रहे हैं और देखते ही [देखनेवालेके] चित्तको मानो चुरा लेते हैं। उनकी चितवन (दृष्टि) बड़ी मनोहर है और भौंहें तिरछी एवं सुन्दर हैं। [माथेपर] तिलककी रेखाएँ ऐसी सुन्दर हैं मानो [मूर्तिमती] शोभापर मुहर लगा दी गयी है। सिरपर सुन्दर चौकोनी टोपियाँ [दिये] हैं, काले और घुँघराले बाल हैं। दोनों भाई नखसे लेकर शिखातक (एँड़ीसे चोटीतक) सुन्दर हैं और सारी शोभा जहाँ-जैसी चाहिये वैसी ही है।

४—जनकपुरकी फुलवारीमें श्रीराम-लक्ष्मणका ध्यान

सोभा सीवँ सुभग दोउ बीरा। नील पीत जलजाभ सरीरा॥
मोर पंख सिर सोहत नीके। गुच्छ बीच बिच कुसुम कली के॥
भाल तिलक श्रमबिंदु सुहाए। श्रवन सुभग भूषन छबि छाए॥
बिकट भृकुटि कच घूघरवारे। नव सरोज लोचन रतनारे॥
चारु चिबुक नासिका कपोला। हास बिलास लेत मनु मोला॥
मुख छबि कहि न जाइ मोहि पाहीं। जो बिलोकि बहु काम लजाहीं॥
उर मनि माल कंबु कल गीवा। काम कलभ कर भुज बलसींवा॥
सुमन समेत बाम कर दोना। सावँर कुअँर सखी सुठि लोना॥
केहरि कटि पट पीत धर सुषमा सील निधान।
देखि भानुकुलभूषनहि बिसरा सखिन्ह अपान॥

(रा० च० मा० १। २३३। १—८; २३३)

दोनों सुन्दर भाई शोभाकी सीमा हैं, उनके शरीरकी आभा नीले और पीले कमलकी-सी है। सिरपर सुन्दर मोरपंख सुशोभित हैं। उनके बीच-बीचमें फूलोंकी कलियोंके गुच्छे लगे हैं। माथेपर तिलक और पसीनेकी बूँदें शोभायमान हैं। कानोंमें सुन्दर भूषणोंकी छबि छायी है। टेढ़ी भौंहें और घुँघराले बाल हैं। नये लाल कमलके समान रतनारे (लाल) नेत्र हैं। ठोड़ी, नाक और गाल बड़े सुन्दर हैं और हँसीकी शोभा मनको मोल लिये लेती है। मुखकी छबि तो मुझसे कही भी नहीं जाती। जिसे देखकर बहुत-से कामदेव लजा जाते हैं। वक्षःस्थलपर मणियोंकी माला है। शंखके सदृश सुन्दर गला है। कामदेवके हाथीके बच्चेकी सूँड़के समान (उतार-चढ़ाववाली एवं कोमल) भुजाएँ हैं जो बलकी सीमा हैं। जिसके बायें हाथमें फूलोंसहित दोना है, हे सखि! वह साँवला कुँवर तो बहुत ही सलोना है। सिंहकी-सी (पतली,लचीली) कमरवाले पीताम्बर धारण किये हुए, शोभा और शीलके भण्डार सूर्यकुलके भूषण श्रीरामचन्द्रजीको देखकर सखियाँ अपने-आपको भूल गयीं।

५—धनुष-यज्ञमें श्रीराम-लक्ष्मणका ध्यान

राजत राज समाज महुँ कोसलराज किसोर।
सुंदर स्यामल गौर तन बिस्व बिलोचन चोर॥
सहज मनोहर मूरति दोऊ। कोटि काम उपमा लघु सोऊ॥
सरद चंद निंदक मुख नीके। नीरज नयन भावते जी के॥
चितवनि चारु मार मनु हरनी। भावति हृदय जाति नहिं बरनी॥
कल कपोल श्रुति कुंडल लोला। चिबुक अधर सुंदर मृदु बोला॥
कुमुदबंधु कर निंदक हाँसा। भृकुटी बिकट मनोहर नासा॥
भाल बिसाल तिलक झलकाहीं। कच बिलोकि अलि अवलि लजाहीं॥
पीत चौतनीं सिरन्हि सुहाईं। कुसुम कलीं बिच बीच बनाईं॥
रेखें रुचिर कंबु कल गीवाँ। जनु त्रिभुवन सुषमा की सीवाँ॥
कुंजर मनि कंठा कलित उरन्हि तुलसिका माल।
बृषभ कंध केहरि ठवनि बल निधि बाहु बिसाल॥
कटि तूनीर पीत पट बाँधें। कर सर धनुष बाम बर काँधें॥
पीत जग्य उपबीत सुहाए। नख सिख मंजु महाछबि छाए॥

(रा० च० मा० १। २४२; २४३। १—८; २४३; २४४। १-२)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुन्दर साँवले और गोरे शरीरवाले तथा विश्वभरके नेत्रोंको चुरानेवाले कोसलाधीशके कुमार राज-समाजमें [इस प्रकार] सुशोभित हो रहे हैं। दोनों मूर्तियाँ स्वभावसे ही (बिना किसी बनाव-शृंगारके) मनको हरनेवाली हैं। करोड़ों कामदेवोंकी उपमा भी उनके लिये तुच्छ है। उनके सुन्दर मुख शरद् [पूर्णिमा] के चन्द्रमाकी भी निन्दा करनेवाले (उसे नीचा दिखानेवाले) हैं और कमलके समान नेत्र मनको बहुत ही भाते हैं। सुन्दर चितवन [सारे संसारके मनको हरनेवाले] कामदेवके भी मनको हरनेवाली है। वह हृदयको बहुत ही प्यारी लगती है, पर उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। सुन्दर गाल हैं, कानोंमें चंचल (झूमते हुए) कुण्डल हैं। ठोड़ी और अधर (ओठ) सुन्दर हैं, कोमल वाणी है। हँसी चन्द्रमाकी किरणोंका तिरस्कार करनेवाली है। भौंहें टेढ़ी और नासिका मनोहर है। [ऊँचे] चौड़े ललाटपर तिलक झलक रहे हैं (दीप्तिमान् हो रहे हैं)। [काले घुँघराले] बालोंको देखकर भौंरोंकी पंक्तियाँ भी लजा जाती हैं। पीली चौकोनी टोपियाँ सिरोंपर सुशोभित हैं, जिनके बीच-बीचमें फूलोंकी कलियाँ बनायी (काढ़ी) हुई हैं। शंखके समान सुन्दर (गोल) गलेमें मनोहर तीन रेखाएँ हैं। जो मानो तीनों लोकोंकी सुन्दरताकी सीमा [को बता रही] हैं। हृदयोंपर गजमुक्ताओंके सुन्दर कंठे और तुलसीकी मालाएँ सुशोभित हैं। उनके कंधे बैलोंके कंधेकी तरह [ऊँचे तथा पुष्ट] हैं। ऐंड़ (खड़े होनेकी शान) सिंहकी-सी है और भुजाएँ विशाल एवं बलकी भण्डार हैं। कमरमें तरकश और पीताम्बर बाँधे हैं। [दाहिने] हाथोंमें बाण और बायें सुन्दर कंधेपर धनुष तथा पीले यज्ञोपवीत (जनेऊ) सुशोभित हैं। नखसे लेकर शिखातक सब अङ्ग सुन्दर हैं। उनपर महान् शोभा छायी हुई है।

६—श्रीरामका वरवेषमें ध्यान

स्याम सरीरु सुभायँ सुहावन। सोभा कोटि मनोज लजावन॥
जावक जुत पद कमल सुहाए। मुनि मन मधुप रहत जिन्ह छाए॥
पीत पुनीत मनोहर धोती। हरति बाल रबि दामिनि जोती॥
कल किंकिनि कटि सूत्र मनोहर। बाहु बिसाल बिभूषन सुंदर॥
पीत जनेउ महाछबि देई। कर मुद्रिका चोरि चितु लेई॥
सोहत ब्याह साज सब साजे। उर आयत उर भूषन राजे॥
पिअर उपरना काखासोती। दुहुँ आँचरन्हि लगे मनि मोती॥
नयन कमल कल कुंडल काना। बदनु सकल सौंदर्ज निधाना॥
सुंदर भृकुटि मनोहर नासा। भाल तिलकु रुचिरता निवासा॥
सोहत मौरु मनोहर माथे। मंगलमय मुकुता मनि गाथे॥

(रा० च० मा० १। ३२७। १—१०)

७—वनवेशमें श्रीराम-लक्ष्मणका ध्यान

मुदित नारि नर देखहिं सोभा। रूप अनूप नयन मनु लोभा॥
एकटक सब सोहहिं चहुँ ओरा। रामचंद्र मुख चंद चकोरा॥
तरुन तमाल बरन तनु सोहा। देखत कोटि मदन मनु मोहा॥
दामिनि बरन लखन सुठि नीके। नख सिख सुभग भावते जी के॥
मुनिपट कटिन्ह कसें तूनीरा। सोहहिं कर कमलनि धनु तीरा॥
जटा मुकुट सीसनि सुभग उर भुज नयन बिसाल।
सरद परब बिधु बदन बर लसत स्वेद कन जाल॥

(रा० च० मा० २। ११५। ४—८; ११५)

८—वनवेशमें श्रीसीतारामका ध्यान

सजनी ! हैं कोउ राजकुमार।
पंथ चलत मृदु पद-कमलनि दोउ सील-रूप-आगार॥ १॥
आगे राजिवनैन स्याम-तनु, सोभा अमित अपार।
डारौं वारि अंग-अंगनिपर कोटि-कोटि सत मार॥ २॥
पाछें गौर किसोर मनोहर, लोचन-बदन उदार।
कटि तूनीर कसे, कर सर-धनु, चले हरन छिति-भार॥ ३॥
जुगुल बीच सुकुमारि नारि इक राजति बिनहि सिँगार।
इन्द्रनील, हाटक, मुकुतामनि जनु पहिरे महि हार॥ ४॥
अवलोकहु भरि नैन, बिकल जनि होहु, करहु सुविचार।
पुनि कहँ यह सोभा, कहँ लोचन, देह-गेह-संसार ?॥ ५॥
सुनि प्रिय बचन चितै हित कै रघुनाथ कृपा-सुखसार।
तुलसिदास प्रभु हरे सबन्हिके मन, तन रही न सँभार॥ ६॥

(गीतावली, अयो० २९)

९—सुबेल पर्वतपर श्रीरामका ध्यान

सिखर एक उतंग अति देखी। परम रम्य सम सुभ्र बिसेषी॥
तहँ तरु किसलय सुमन सुहाए। लछिमन रचि निज हाथ डसाए॥
ता पर रुचिर मृदुल मृगछाला। तेहिं आसन आसीन कृपाला॥
प्रभु कृत सीस कपीस उछंगा। बाम दहिन दिसि चाप निषंगा॥
दुहुँ कर कमल सुधारत बाना। कह लंकेस मंत्र लगि काना॥
बड़भागी अंगद हनुमाना। चरन कमल चापत बिधि नाना॥
प्रभु पाछें लछिमन बीरासन। कटि निषंग कर बान सरासन॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०—रणविजयी श्रीरामका ध्यान

राजत राम काम सत-सुंदर ।

रिपु रन जीति अनुज सँग सोभित, फेरत चाप बिसिष बनरुह-कर ॥ १ ॥

स्याम सरीर रुचिर श्रम-सीकर, सोनित-कन बिच बीच मनोहर ।

जनु खद्योत-निकर, हरिहित-गन, भ्राजत मरकत-सैल-सिखरपर ॥ २ ॥

घायल बीर बिराजत चहुँ दिसि, हरषित सकल रिच्छ अरु बनचर ।

कुसुमित किंसुक-तरु समूह महँ तरुन तमाल बिसाल बिटप बर ॥ ३ ॥

राजिव-नयन बिलोकि कृपा करि, किए अभय मुनि-नाग, बिबुध-नर ।

तुलसिदास यह रूप अनूपम हिय-सरोज बसि दुसह बिपतिहर ॥ ४ ॥

(गीतावली, लंका० १६)

११—सिंहासनासीन श्रीरामका ध्यान

आजु रघुबीर-छबि जात नहि कछु कही ।

सुभग सिंघासनासीन, सीतारवन,

भुवन-अभिराम, बहु काम सोभा सही ॥ १ ॥

चारु चामर-ब्यजन, छत्र-मनिगन बिपुल,

दाम-मुकुतावली-जोति जगमगि रही ।

मनहुँ राकेस सँग हंस-उडुगन-बरहि

मिलन आए हृदय जानि निज नाथ ही ॥ २ ॥

मुकुट सुंदर सिरसि, भालबर, तिलक-भ्रू,

कुटिल कच, कुंडलनि परम आभा लही ।

मनहुँ हरडर जुगल मारध्वजके मकर

लागि स्रवननि करत मेरुकी बतकही ॥ ३ ॥

अरुन-राजीव-दल-नयन करुना-अयन,

बदन सुषमासदन, हास त्रय-तापही ।

बिबिध कंकन हार, उरसि गजमनि-माल,

मनहुँ बग-पाँति जुगमिलि चली जलद ही ॥ ४ ॥

पीत निरमल चैल, मनहुँ मरकत सैल,

पृथुल दामिनि रही छाइ तजि सहजही ।

ललित सायक-चाप पीन भुज बल अतुल

मनुजतनु दनुजबन-दहन, मंडन-मही ॥ ५ ॥

जासु गुन-रूप नहि कलित निरगुन सगुन,

संभु, सनकादि, सुक भगति दृढ़ करि गही ।

दास तुलसी राम-चरन-पंकज सदा

बचन मन करम चहै प्रीति नित निरबही ॥ ६ ॥

(गीतावली, उत्तर० ६)

ऐसो को उदार जग माहीं

मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरघुनाथजीको पता लगा कि उनके परम भक्त विभीषणको कहीं ब्राह्मणोंने बाँध लिया है। श्रीराघवेन्द्रने चारों ओर दूत भेजे, पता लगाया और अन्तमें स्वयं वहाँ पहुँचे, जहाँ ब्राह्मणोंने विभीषणको दृढ़ शृंखलाओंसे बाँधकर एक भूगर्भगृहमें बंदी बना रखा था।

मर्यादापुरुषोत्तमको कुछ पूछना नहीं पड़ा। ब्राह्मणोंने प्रभुका स्वागत किया, उनका आतिथ्य किया और कहा—महाराज ! इस वनमें हमारे आश्रमके पास एक राक्षस रथमें बैठकर आया था। हममेंसे एक अत्यन्त वृद्ध मौनव्रती वनमें कुश लेने गये थे। राक्षसने उनसे कुछ पूछा, किंतु मौनव्रती होनेसे वे उत्तर नहीं दे सके। दुष्ट राक्षसने उनके ऊपर पाद-प्रहार किया। वे वृद्ध तो थे ही, गिर पड़े और मर गये। हमलोगोंको समाचार मिला। हमने उस दुष्ट राक्षसको पकड़ लिया, किंतु हमारे द्वारा बहुत पीटे जानेपर भी वह मरता नहीं है। आप यहाँ आ गये हैं, यह सौभाग्यकी बात है। उस दुष्ट हत्यारेको आप दण्ड दीजिये।

ब्राह्मण विभीषणको उसी दशामें ले आये। विभीषणका मस्तक लज्जासे झुका था, किंतु श्रीराम तो और भी संकुचित हो गये। उन्होंने ब्राह्मणोंसे कहा—'किसीका सेवक कोई अपराध करे तो वह अपराध स्वामीका ही माना जाता है। आपलोग इनको छोड़ दें। मैंने इन्हें कल्पपर्यन्त जीवित रहनेका वरदान तथा लंकाका राज्य दिया है। ये मेरे अपने हैं, अतः इनका अपराध तो मेरा ही अपराध है। आपलोग जो दण्ड देना चाहें, मैं उसे स्वीकार करूँगा।'

विभीषणजीने जान-बूझकर ब्रह्महत्या नहीं की थी। वे वृद्ध ब्राह्मण हैं और मौनव्रती हैं, यह विभीषणको पता नहीं था। उनको मार डालनेकी तो विभीषणकी इच्छा थी ही नहीं। अतः अनजानमें हुई हत्याका प्रायश्चित्त ही ऋषियोंने बताया और वह प्रायश्चित्त विभीषणने नहीं, श्रीराघवेन्द्रने स्वयं किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीरामभद्र पूर्णावतार हैं

(अनन्तश्रीविभूषित द्वारका-शारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीस्वरूपानन्द सरस्वतीजी महाराज)

निर्विशेष निर्गुण-निराकार परात्पर सच्चिदानन्दघन परब्रह्म विभु है, काष्ठमें अग्निवत् निगूढ है, चराचर जगत्में परिव्याप्त है, वह वाङ्मनोतीत है, अपनी ही शक्तिके द्वारा सगुण-साकार भावोंमें अभिव्यक्त होता है, निर्ग्रन्थ वीतराग आप्तकाम परम निष्काम अब्भक्ष वायुभक्ष योगिजन जिसमें निरवधि रमते रहते हैं, वह अपने अंश और कलाओंके द्वारा जीवोंके विमुक्त्यर्थ प्रकट होता है, उस अवतरणमें पुराणपुरुष परब्रह्मरूप चिन्मय महाविष्णुका अवतरण रामरूपसे होता है। रामपूर्वतापिन्युपनिषद्में बताया है—'सच्चिदानन्दमय महाविष्णु श्रीहरि जब रघुकुलमें दशरथजीके यहाँ अवतीर्ण हुए, उस समय उनका नाम 'राम' हुआ। इस नामकी व्युत्पत्ति इस प्रकार है—'जो महीतलपर स्थित होकर भक्तजनोंका सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करते हैं और राजाके रूपमें सुशोभित होते हैं, वे राम हैं'—ऐसा विद्वानोंने लोकमें 'राम' शब्दका अर्थ व्यक्त किया है—

चिन्मयेऽस्मिन् महाविष्णौ जाते दशरथे हरौ।
रघोः कुलेऽखिलं राति राजते यो महीस्थितः॥
स राम इति लोकेषु विद्वद्भिः प्रकटीकृतः।

वह परब्रह्म रामरूपसे अवतरित होकर मर्यादा-पुरुषोत्तमावतारद्वारा सनातनधर्मका स्वरूप जीवोंके सामने कल्याणार्थ प्रतिष्ठापित करता है, दुष्टनिग्रह सज्जनानुग्रहद्वारा स्वरूपोपलब्धिका सुपथ राजमार्ग स्वयं आचरित करके प्रस्तुत करता है। परमात्मा महाविष्णु जब आनन्दकन्द-रूपमें विराजने लगे तो रामनामसे प्रसिद्ध हुए। उनके द्वारा दुष्ट राक्षसोंका मरण हुआ, इसलिये भी 'राम'नामकी सार्थकता हुई। उन नित्यानन्द चित्स्वरूपमें योगी और ज्ञानीजन नित्य-निरन्तर रमण करते हैं, इसलिये उनका नाम 'राम' है—

रमन्ते योगिनोऽनन्ते नित्यानन्दे चिदात्मनि।
इति रामपदेनासौ परं ब्रह्माभिधीयते॥

(रामपूर्वतापिन्युपनिषद्)

वाल्मीकिरामायणमें भी उस पूर्ण ब्रह्मका अवतरण इन्हीं भावोंमें अभिव्यक्त हुआ है। रामायणके प्रारम्भमें श्रीवाल्मीकिजीने श्रीनारदजीसे यही प्रश्न किया था कि सभी गुणोंसे सुसम्पन्न तीनों लोकोंमें बल-पराक्रमादि गुणोंसे सर्वातिशायी पूर्णपुरुष इस त्रिलोकीमें इस समय कौन है?

इसका उत्तर देते हुए 'मूलरामायण'-रूपमें उपक्रम करके रामचरितका नारदजीने वर्णन किया। बादमें विस्तारसे अगले कार्यक्रमकी रूपरेखा तथा अवतरणका वर्णन किया और जब देवताओंने रावणके अत्याचारसे अत्यन्त दुःखी होकर भगवान् विष्णुसे प्रार्थना की तो वे विनतानन्दन गरुडपर आरूढ होकर वहाँ पधारे। तब देवताओंने उनसे कहा कि हमलोग आपको महापापी रावणके वधके लिये नियुक्त करते हैं। आप पृथिवीपर अवतार लेकर उसका संहार करें। इसपर उन्होंने महाराज दशरथके पुत्रेष्टियज्ञके फलस्वरूप उनके पुत्र-रूपमें प्रकट होकर रावणके वधका संकल्प किया और फिर महर्षि वसिष्ठसे विद्याध्ययनकर विश्वामित्रके यज्ञकी रक्षा करते हुए मिथिला पधारे। वहाँ विदेहराज मिथिलाधिपति जनकजीको भूमिमें प्राप्त अयोनिजा सीताजीका पाणिग्रहण किया। श्रीवाल्मीकिरामायणमें इस प्रकार वर्णन आया है—

अब्रवीज्जनको राजा कौसल्यानन्दवर्धनम्।
इयं सीता मम सुता सहधर्मचरी तव॥
प्रतीच्छ चैनां भद्रं ते पाणिं गृह्णीष्व पाणिना।
पतिव्रता महाभागा छायेवानुगता सदा॥

(वा० रा० १।७३।२६-२७)

अध्यात्मरामायणमें ब्रह्माजीकी स्तुतिके उत्तरमें भगवान्ने कहा कि 'मैं कश्यपकी तपस्यासे संतुष्ट होकर उनके पुत्र-रूपमें होनेका वर दे चुका हूँ, वे इस समय दशरथके रूपमें पृथिवीमें विद्यमान हैं, उनकी पत्नी कौसल्याके पुत्र-रूपमें आविर्भूत होऊँगा। अन्य दो माताओंके गर्भसे अन्य तीन रूपोंसे पुत्र होऊँगा। मेरी योगमाया 'सीता' नामसे विदेहराज जनककी पुत्री होकर मिथिलामें प्रकट होंगी। उनके साथ मैं सभी कार्य सम्पादित करूँगा'—

योगमायापि सीतेति जनकस्य गृहे तदा।
उत्पत्स्यते तया सार्धं सर्वं सम्पादयाम्यहम्।
इत्युक्त्वान्तर्दधे विष्णुर्ब्रह्मा देवानथाब्रवीत्॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् श्रीरामके तात्त्विक रूपका तथा भगवती सीताके रूपका वर्णन महादेव शंकर पार्वतीजीकी जिज्ञासा-शान्तिके लिये करते हैं।

पार्वतीजीने प्रश्न किया कि प्रमादरहित सिद्धगण श्रीरामको परम अद्वितीय सबके आदिकारण और प्रकृतिके गुणप्रवाहसे परे बतलाते हैं तथा वे अहर्निश उनका भजन करके परमपद भी प्राप्त करते हैं, किंतु कोई-कोई कहते हैं कि राम परब्रह्म होनेपर भी अपनी मायासे आवृत हो जानेके कारण अपने आत्मस्वरूपको नहीं जानते थे; इसलिये उन्होंने अन्य गुरुजनों, ऋषियों, महर्षियोंके उपदेशसे आत्मतत्त्वको जाना। यदि वे आत्मतत्त्वको जानते होते तो उन्होंने सीताहरणमें विलाप क्यों किया और यदि उन्हें आत्मज्ञान नहीं था तो वे सामान्य जीवों-जैसे ही हुए फिर उनका भजन क्यों किया जाय?

इस जिज्ञासाके उत्तरमें महादेव प्रसन्न होते हुए बोले कि तुमने श्रीरामतत्त्वपर जो जिज्ञासा की है, वैसी किसीने आजतक नहीं की। मैं उस विषयमें बताऊँगा—

'धन्यासि भक्तासि परात्मनस्त्वं यज्ज्ञातुमिच्छा तव रामतत्त्वम्।'

भगवान् महादेवने उन्हें सीताजीका और हनुमान्‌जीका संवाद सुनाया। रावण-विजयके पश्चात् अयोध्या आनेपर तथा राज्याभिषेक हो जानेपर श्रीरामभद्रने परम वीतराग हनुमान्‌को रामतत्त्व-रहस्यका अधिकारी जानकर सीताजीसे उन्हें बतानेको कहा। श्रीसीताजी हनुमान्‌से बोलीं—वत्स! श्रीरामको सच्चिदानन्दघन परब्रह्म समझो और मुझे उनकी त्रिगुणात्मिका मूल-प्रकृति जानो। इनकी संनिधिमात्रसे मैं सृष्टि-कार्य एवं कर्म-सम्पादन करती हूँ। जितना भी रामचरित हुआ है अर्थात् श्रीरामका रघुकुलमें जन्मसे लेकर अयोध्यामें राज्याभिषेक-पर्यन्त जो भी हुआ है, वह सभी मेरा ही किया हुआ है। परंतु अज्ञानीजन उसे उन निर्विकार राममें आरोपित कर देते हैं।

राम वस्तुतः कोई भी क्रिया नहीं करते। वे आनन्दस्वरूप अविचल और परिणामहीन हैं, केवल माया-गुणोंसे व्याप्त होनेके कारण ही वैसे-वैसे प्रतीत होते हैं—

रामो न गच्छति न तिष्ठति नानुशोच-
त्याकाङ्क्षते त्यजति नो न करोति किंचित्।
आनन्दमूर्तिरचलः परिणामहीनो
मायागुणाननुगतो हि तथा विभाति॥

बादमें भगवान् श्रीरामने स्वयं अपने श्रीमुखसे हनुमान्‌को उपदेश दिया, जिसे अध्यात्मरामायणमें श्रीमहादेवजीने श्रीपार्वतीजीको सुनाया, वह तत्त्वोपदेश 'रामहृदय' कहलाता है।

भगवान् श्रीराम निर्गुण-निराकार, सगुण-निराकार होते हुए सगुण-साकाररूपमें अवतरित होकर भक्तजनोंको आह्लादित तो करते ही हैं, पर उनका तात्त्विक स्वरूप वही है, जिसे प्रारम्भमें बता आये हैं।

ब्रह्मके निर्गुण-निराकार एवं सगुण-निराकार भावोंका गोस्वामी तुलसीदासजीने भी शिव-पार्वती-संवादमें सुस्पष्ट-रूपसे वर्णन किया है—

सगुनहि अगुनहि नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा॥
अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई॥

× × ×

बिषय करन सुर जीव समेता। सकल एक तें एक सचेता॥
सब कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई॥
जगत प्रकास्य प्रकासक रामू। मायाधीस ग्यान गुन धामू।
जासु सत्यता तें जड़ माया। भास सत्य इव मोह सहाया॥
रजत सीप महुँ भास जिमि जथा भानु कर बारि।
जदपि मृषा तिहुँ काल सोइ भ्रम न सकइ कोउ टारि॥

(रा० च० मा० १। ११६। १-२, ११७। ५—८; ११७)

वह स्वतन्त्र ब्रह्म अपनी अचिन्त्य शक्तिसे साधन-निरपेक्ष होकर सभी कार्य करता है।

उनका अवतार लेनेका मुख्य प्रयोजन है—अपने निर्मल गेय, ध्येय, अमृतमय यशका भक्तोंमें विस्तार करना, जिसे गाकर सब लोग संसारको तर जायँ—

सोइ जस गाइ भगत भव तरहीं। कृपासिंधु जन हित तनु धरहीं॥

(रा० च० मा० १। १२२। १)

भगवान् रामके अवतार-प्रसंगमें श्रीमद्भागवतमें कहा गया है—

मर्त्यावतारस्त्विह मर्त्यशिक्षणं
रक्षोवधायैव न केवलं विभोः।
कुतोऽन्यथा स्याद्रमतः स्व आत्मनः
सीताकृतानि व्यसनानीश्वरस्य॥

(श्रीमद्भा० ५। १९। ५)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात् प्रभो! आपका मनुष्यावतार केवल राक्षसोंके वधके लिये ही नहीं है, इसका मुख्य उद्देश्य तो मनुष्योंको शिक्षा देना है। अन्यथा अपने स्वरूपमें ही रमण करनेवाले साक्षात् जगदात्मा जगदीश्वरको सीताजीके वियोगमें इतना दुःख कैसे हो सकता था।

श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षित्से मर्मकी बात कही—

स्मरतां हृदि विन्यस्य विद्धं दण्डककण्टकैः।
स्वपादपल्लवं राम आत्मज्योतिरगात् ततः॥

(श्रीमद्भा० ९। ११। १९)

भगवान् श्रीराम अपनी लीलाका संवरण करते हुए अन्तमें अपना स्मरण करनेवाले भक्तोंके हृदयमें अपने उन चरण-कमलोंको स्थापित करके, जो दण्डकवनके काँटोंसे बिंध गये थे, अपने स्वयं-प्रकाश परमज्योतिर्मय धाममें चले गये।

भगवान्‌की स्वयंकी वाणी है कि जो मेरे दिव्य जन्म-कर्मोंको तत्त्वतः जानता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता और वह मुझे ही प्राप्त कर लेता है—

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥

(गीता ४। ९)

भगवान्‌के नाम, रूप, लीला और धाम—ये सभी एक ही तत्त्व हैं। इनका चिन्तन, आराधन शास्त्रोंमें प्रतिपादित है। नामकी महिमा अवर्णनीय है, फिर कलियुगमें तो नाम-साधना ही मुख्य एकमात्र साधन है। धर्मराज यमने अपने दूतोंसे कहा—

एतावतालमघनिर्हरणाय पुंसां
संकीर्तनं भगवतो गुणकर्मनाम्नाम्।
विक्रुश्य पुत्रमघवान् यदजामिलोऽपि
नारायणेति म्रियमाण इयाय मुक्तिम्॥

(श्रीमद्भा० ६। ३। २४)

(प्रिय दूतो!) भगवान्‌के गुण-लीला और नामोंका भलीभाँति कीर्तन मनुष्योंके पापोंका सर्वथा विनाश कर दे, यह कोई उसका बड़ा फल नहीं है, क्योंकि अत्यन्त पापी अजामिलने मरनेके समय चञ्चल-चित्तसे अपने पुत्रका नाम 'नारायण' उच्चारण किया। इस नामाभासमात्रसे ही उसके सारे पाप तो क्षीण हो ही गये, मुक्तिकी प्राप्ति भी हो गयी।

गोस्वामी श्रीतुलसीदासजीने नाम-महिमापर बड़ा ही बल दिया है, बड़ी ही युक्तियाँ दी हैं। नामके माहात्म्य-प्रतिपादनमें वे कहते हैं—

सकल कामना हीन जे राम भगति रस लीन।
नाम सुप्रेम पियूष ह्रद तिन्हहुँ किए मन मीन॥

(रा० च० मा० १। २२)

अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा॥
मोरें मत बड़ नामु दुहू तें। किए जेहिं जुग निज बस निज बूतें॥

× × ×

निरगुन तें एहि भाँति बड़ नाम प्रभाऊ अपार।
कहउँ नामु बड़ राम तें निज बिचार अनुसार॥
राम एक तापस तिय तारी। नाम कोटि खल कुमति सुधारी॥

× × ×

भंजेउ राम आपु भव चापू। भव भय भंजन नाम प्रतापू॥

—इत्यादि विशद रूपसे वर्णन किया है।

रूपका चिन्तन भी कृतकृत्यताके लिये किया जाता है—

चिन्मयस्याद्वितीयस्य निष्कलस्याशरीरिणः।
उपासकानां कार्यार्थं ब्रह्मणो रूपकल्पना॥

(रामपूर्वतापिन्युपनिषद् १। ७)

यद्यपि ब्रह्म चिन्मय, अद्वितीय, प्राकृत अवयवरहित और (पाञ्चभौतिक) शरीरसे रहित है, तथापि भक्तजनोंके अभीष्ट-कार्यकी सिद्धिके लिये वह चिन्मय देहको प्रकट करता है—भक्तोंके स्नेहवश निराकार ब्रह्म भी नराकार धारण कर लेता है।

लीलाचिन्तनका भी फल भवबन्धनमुक्ति कहा गया है। यथा—

रामायणं काव्यमनन्तपुण्यं
श्रीशङ्करेणाभिहितं भवान्यै।
भक्त्या पठेद् यः शृणुयात् स पापै-
र्विमुच्यते जन्मशतोद्भवैश्च॥

रामायण नामक यह अनन्त पुण्यप्रद काव्य श्रीभगवान् शंकरने पार्वतीसे कहा है। जो पुरुष इसे भक्तिपूर्वक पढ़ता है अथवा सुनता है वह अपने सैकड़ों जन्मोंके पाप-पुञ्जसे मुक्त हो जाता है।

भगवान् आद्य शंकराचार्यजी भी श्रीरामभुजङ्गप्रयातस्तोत्र-में स्तुति करते हुए कहते हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पवित्रं चरित्रं विचित्रं त्वदीयं
नरा ये स्मरन्त्यन्वहं रामचन्द्रम्।
भवन्तं भवान्तं भरन्तं भजन्तो
लभन्ते कृतान्तं न पश्यन्त्यतोऽन्ते॥

हे रामचन्द्रजी ! आपके पवित्र और विचित्र (अलौकिक) चरित्रको—लीलाओंको जो लोग प्रतिदिन स्मरण करते हैं, वे विश्वम्भर आपकी भक्ति करते हुए संसार-सागरसे तर जाते हैं, जीवनके अन्तमें यमराजका मुख नहीं देखते।

भगवान्‌के धामका भी माहात्म्य कम नहीं है। एक उक्ति है—

अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी॥

धामके माहात्म्यके विषयमें स्कन्दपुराणके द्वितीय वैष्णवखण्डमें अयोध्याका विशेष माहात्म्य वर्णित है। उसके दसवें अध्यायमें प्रायः अयोध्याके सभी पवित्र तीर्थोंका निर्देश हुआ है। जो आज भी वहाँ स्थित हैं।

अयोध्या-धाम (साकेत-धाम) में सभी दिशाओंमें स्थित तीर्थोंका दर्शन करे। सर्वप्रथम विघ्नेश्वरका दर्शन करे, फिर वसिष्ठ-स्थानका फिर लोमश-स्थानका दर्शन करे। तदनन्तर जन्म-स्थानका दर्शन करे जो लोमशस्थानसे पश्चिममें स्थित है। नवमी (पुष्ययुक्ता-रामनवमी) के दिन व्रती होकर जन्मस्थानका दर्शन करे। उस स्थानमें स्नान-दानादि करनेसे मनुष्य जन्म-बन्धनादिसे मुक्त हो जाता है। प्रतिदिन सहस्रों कपिला गायोंके दानका फल जन्मस्थानके दर्शनमात्रसे मिल जाता है। माता-पिता और गुरुभक्तिका जो फल है, वह जन्मस्थानके दर्शन-मात्रसे मिल जाता है।

इस प्रकार भगवान् रामकी महिमा सभी दृष्टियोंसे अनुपमेय है। रामके नामकी महिमा अवर्णनीय है। उसीके जपसे वाल्मीकि-तुलसीदास-जैसे अनन्त कवि हुए। उन्हींके चरित्र-पठनसे व्यास, शुकदेव, भास, कालिदास, भवभूति आदि अनेक श्रेष्ठ रामकथा-गायक कवि हुए और अनन्त सिद्ध भक्त भी हुए और आगे भी होते जायँगे। राम ही विभिन्न अवतारोंमें कृष्ण, त्रिविक्रम, बुद्ध आदि रूपोंमें अवतरित होकर विश्वकी रक्षा करते रहे और आज भी अपने यशःशरीर और नाम-रूप-लीला-धामके माध्यमसे विश्वका सच्चा कल्याण कर रहे हैं। तत्त्वकी बात तो यह है कि वे ही सर्वत्र व्याप्त हैं। जो श्रीरामको नहीं देखता और जिसे श्रीराम नहीं देख लेते, वह समस्त लोकोंमें निन्दित समझा जाता है तथा स्वयं उसकी अन्तरात्मा भी उसे धिक्कारती है।

यश्च रामं न पश्येत्तु यं च रामो न पश्यति।
निन्दितः सर्वलोकेषु स्वात्माप्येनं विगर्हते॥

(वा० रा० २। १७। १४)

अतः जैसे-तैसे भगवान् रामका साक्षात् करना ही सबका पुनीत कर्तव्य है।

———

मधुर मृदु सुंदर राजकुमार॥
स्यामल-गौर किसोर बंधु दोउ सुचि सुषमा-आगार।
कटि तूनीर, तीर-धनु कर महँ धीर बीर सकुमार॥
जटा-जूट-मंडित, मुनि पट, उर-बाहु बिसाल उदार।
चले जात पथ, पग बिनु पनही रूप-सील-भंडार॥
उभय मध्य राजति श्रीजानकि सोभामई अपार।
अति निर्मल देखत मन उमगत श्रद्धा-सरिता-धार॥
बूझति पिय सौं चकित, कथा बन की करि, हृदय बिचार।
हेरि-हेरि सिय-तनु समुझावत प्रिया, भरे हिय प्यार॥
लखन सकुचि सोचत सिय-हिय की बात, न पावत पार।
धन्य ते, जिन निरखे इनहीं, भरि नैन सकल सुख-सार॥

(पदरत्नाकर)

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीरामका वास्तविक स्वरूप और उनकी भक्ति

(स्वामी श्रीविज्ञानानन्दजी सरस्वती)

मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामचन्द्रजी धर्म तथा आदर्शके प्रतीक हैं। उनका पावन एवं महान् आदर्श हमारे धर्म तथा संस्कृतिमें अनुस्यूत है। यही कारण है कि हमारा धर्म तथा हमारी संस्कृति अनादिकालसे लेकर अबतक जीवित है।

विश्वका प्रत्येक धर्म जगत्के मूलमें एक सर्वशक्तिमान् शाश्वत ईश्वरीय सत्ताको मानता है, स्वीकार करता है और यह उचित ही है; क्योंकि देश तथा भाषाका अन्तर हो सकता है, इसका नाम और रूप भी भिन्न-भिन्न हो सकता है, उपासनाकी पद्धति भी भिन्न-भिन्न हो सकती है, पर उपास्य देवका भेद नहीं हो सकता; क्योंकि वह एक है, सर्वशक्तिमान् है, सर्वव्यापक है, सर्वान्तर्यामी और सर्वनियन्ता तथा सर्वोपरि तत्त्व है। जैसा कि श्रुतिमें कहा गया है—

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः
सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः
साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च॥
(श्वेता० ६। ११)

वह एक ही देव समस्त प्राणियोंके हृदयरूप गुहामें गूढ-रूपमें छिपा हुआ है। वह सर्वव्यापी और समस्त प्राणियोंका अन्तर्यामी परमात्मा है। वही सबका अधिष्ठान है अर्थात् आश्रय है। वह साक्षी, चेतन तथा चेतनता प्रदान करनेवाला विशुद्ध और गुणातीत है। वही राम है। परमेश्वरके अनन्त नाम हैं, उनमेंसे एक नाम राम भी है। राम शब्द 'रम' धातुसे बनता है जिसका अर्थ है—'रमना या रमण करना।' **'रमन्ते योगिनो यस्मिन् स रामः'**—योगीलोग जिसमें रमण करते हैं वही राम है। कारण यह है कि परमेश्वर सबके हृदयमें अन्तर्यामीके रूपमें विद्यमान है इसलिये उसका नाम राम है। ब्रह्मवैवर्तपुराण (१११। १८) में स्पष्ट कहा गया है—

राशब्दो विश्ववचनो मश्चापीश्वरवाचकः।
विश्वानामीश्वरो यो हि तेन रामः प्रकीर्तितः॥

'रा' शब्द परिपूर्णताका बोधक है और 'म' शब्द परमेश्वरका वाचक है। अतः 'राम' पूर्ण परमेश्वर है, यही इसका तात्पर्य है। इसलिये 'राम' शब्दका अर्थ पूर्ण परमात्मा ही लिया जाता है। वाल्मीकिरामायणके युद्धकाण्डमें भी लिखा है कि—

अक्षरं ब्रह्म सत्यं च मध्ये चान्ते च राघव।
लोकानां त्वं परो धर्मो विष्वक्सेनश्चतुर्भुजः॥

हे राघव! आप ही ब्रह्म हैं। सृष्टिके आदि, मध्य और अन्तमें सत्यस्वरूप आप ही अक्षर (ब्रह्म) हैं। लोकोंमें आप ही परमधर्म हैं और विष्वक्सेन विष्णु हैं। श्लोकमें 'अक्षर' और 'विष्वक्सेन' शब्दसे राम निर्गुण-निराकार और सगुण-साकार भी सिद्ध होते हैं। तभी तुलसीदासजीने कहा है—

सगुनहि अगुनहि नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा॥

श्रुतिमें भी कहा है—**'परं चापरं च ब्रह्म यदोंकारः'** (प्रश्नोपनिषद् ५) वही परब्रह्म है और वही अपरब्रह्म भी है। 'ब्रह्मका वास्तविक स्वरूप निर्विशेष ही है, परंतु जब वह मायाविशिष्ट हो जाता है, तब वह सगुण-सविशेष भी बन जाता है। मायाके बिना ब्रह्ममें विकार, सृष्टि और जीव-जगत्का अस्तित्व कहाँ सिद्ध हो सकता है? अतः सीता ब्रह्मको बाँधनेका कारण हुई। इसलिये वह सगुण हुआ, अर्थात् राम हुआ। तभी तो **'रामवल्लभाम्'** ऐसा कहा है। वह राम कौन है? वह राम वही है जो अनादि है। नित्य, शाश्वत और जगत्की उत्पत्ति, स्थिति और लयका कारण है। रघुकुलमें अवतीर्ण होनेसे पूर्व भी रामका नाम विद्यमान था। रत्नाकरको नारदजीने 'राम' नामकी ही दीक्षा दी थी, परंतु रत्नाकर अन्ततक मरा-मरा ही जपता रहा और अन्तमें उसे दीर्घ समाधि लग गयी। दीर्घ समाधिके कारण शरीरमें दीमक लग गये, जिसके कारण उसका नाम ही वाल्मीकि पड़ गया और साधनामें पूर्णताको प्राप्त करके वही आदिकवि कहलाये। अतः राम सनातन ब्रह्म हैं इसमें किंचिन्मात्र संदेह नहीं है। वह एक भी है और अनेक भी है। जैसा कि श्रुतिमें कहा गया है—

अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो
रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च ॥

(कठ० २।२।९)

जिस प्रकार सम्पूर्ण ब्रह्माण्डमें प्रविष्ट एक ही अग्नि नाना रूपोंमें उसके समान रूपवाला-सा हो रहा है, ठीक उसी प्रकार समस्त प्राणियोंका अन्तरात्मा-रूप परब्रह्म परमात्मा एक होते हुए भी विभिन्न रूपोंमें भास रहा है और बाहर भी वही विद्यमान है।

वे ही परमात्मा चराचर प्राणियोंके कल्याणके लिये तथा विशेष रूपसे भक्तोंको आनन्दित करनेके लिये समय-समयपर अनेक रूपोंसे अवतार धारण कर प्रकट होते हैं। त्रेतामें जब रावणादि राक्षसोंका अत्याचार बढ़ गया था, तीनों लोकमें त्राहि-त्राहि मच गयी थी, तब देवताओंने परम मङ्गलमय परमेश्वरसे प्रार्थना की। उनके विनययुक्त वचनोंको सुनकर शोक और संदेहको दूर भगा देनेवाली आकाशवाणी हुई—

जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा। तुम्हहि लागि धरिहउँ नरबेषा ॥
अंसन्ह सहित मनुज अवतारा। लेहउँ दिनकर बंस उदारा ॥

'हे मुनि-सिद्ध और देवताओंके भी अधिपतियो! डरो मत, तुम्हारे लिये मैं मनुष्यका रूप धारण करूँगा और उदार सूर्यवंशमें अंशोंसहित मनुष्यका अवतार लूँगा।' फिर क्या था स्वयं परमेश्वरने ही श्रीरामके रूपमें अवतार लिया और दुष्ट रावणको सहस्रों राक्षसोंसहित मार डाला। पृथिवीका भार उतार दिया। धर्मकी रक्षा हुई, त्रैलोक्य सुखी हो गया और भक्तोंको विशेष आनन्द हुआ।

रामभक्ति

मानव-जीवनमें सबसे बड़ी उपलब्धि भगवद्भक्ति ही है और वह मनुष्यको प्राप्त हो सकती है। भक्तिका तात्पर्य ईश्वरमें आत्यन्तिक प्रेम तथा अनुरागका होना ही है। 'भक्ति' शब्द 'भज्' धातुसे बना है। उसमें 'क्तिन्' प्रत्यय लगानेपर 'भक्ति' शब्द निष्पन्न होता है। इसका अर्थ है—सेवा, पूजा, उपासना तथा भगवान्में नितान्त अनुराग होना। इसलिये शाण्डिल्य-भक्तिसूत्र (१।२) में कहा है—**'सा परानुरक्तिरीश्वरे।'** अर्थात् वह भक्ति परमेश्वरके प्रति अत्यन्त अनुरागरूपा है। इसीको परा भक्तिके नामसे भी कहा गया है। नारदभक्तिसूत्रमें भी कहा है कि—**'सा त्वस्मिन् परमप्रेमरूपा।'** वह भक्ति परमेश्वरके प्रति परम प्रेमरूपा है। अद्वैत वेदान्तके प्रवर्तक आचार्य शंकर भक्तिके विषयमें कहते हैं—

मोक्षकारणसामग्र्यां भक्तिरेव गरीयसी।
स्वस्वरूपानुसंधानं भक्तिरित्यभिधीयते ॥

(विवेकचूडामणि, ३२)

अन्तरात्माके रूपमें प्रत्येक प्राणीके अंदर एक परमेश्वर ही विद्यमान है। उस सर्वात्मामें प्रीतिका होना भी भक्ति है, अर्थात् उसमें नितान्त भक्तिभावका उदय हो जाना ही भक्ति है। इसीको 'स्व-स्वरूपानुसंधान भक्ति' भी कहते हैं, इसलिये प्रथम अपनेमें ईश्वरका दर्शन कर लेना चाहिये, उसके पश्चात् सबमें यानी समस्त भूतप्राणियोंमें ईश्वरदर्शन करना चाहिये। और अन्तमें 'सब कुछ परमेश्वर है' ऐसी प्रत्यक्षानुभूति होनी चाहिये। यही भक्तिभावकी परिपूर्णता है, पूर्ण दर्शन है। उस अवस्थामें भेद नहीं रहता, उपास्य और उपासक एक हो जाता है। यही इसका तात्पर्य है।

साधारणतः भक्ति दो प्रकारकी है—एक 'अपराभक्ति' और दूसरी है 'पराभक्ति'। इनमें नवधा भक्ति (श्रवणादि नौ प्रकारकी भक्ति) अपरा भक्ति है। और परमेश्वरका प्रत्यक्षानुभव ही पराभक्ति है। इसमें मन्त्र-जप और ईश्वर-स्वरूपका ध्यान ही विशेष सफलताका हेतु होता है। यह बात योगशास्त्रमें भी कही गयी है—**'तस्य वाचकः प्रणवः।'** (योग० १।२७)। ईश्वरका वाचक नाम प्रणव अर्थात् ॐकार है। नाम और नामीमें अभेद होता है, इसलिये नाम यानी मन्त्रजपका महत्त्व है। मन्त्रजप कैसे करना चाहिये इस विषयमें कहा है—**'तज्जपस्तदर्थभावनम् ॥'** (योग० १।२८)। 'उस प्रणव—ॐकारका जप उसके अर्थ-रूप ईश्वरके वास्तविक स्वरूपका ध्यान करते हुए करना चाहिये।' इस प्रकारसे राम-मन्त्र-जपके साथ श्रीरामके दिव्य स्वरूपका ध्यान करना चाहिये। इससे राम-भक्ति तथा मुक्ति अवश्य मिल जायगी, इसमें संदेह नहीं है।

तुलयाम लवेनापि न स्वर्गं नापुनर्भवम्। भगवत्सङ्गिसङ्गस्य मर्त्यानां किमुताशिषः ॥

भगवान्के प्रेमी भक्तोंके क्षणमात्रके सत्सङ्गसे स्वर्ग अथवा मोक्षकी भी तुलना नहीं की जा सकती; फिर संसारके तुच्छ भोगोंकी तो बात ही क्या है।—शौनक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामभक्ति तथा रामनाम-साधना

(श्रीरामकृष्ण रामानुजदासजी 'श्रीसंतजी महाराज')

पूज्य गोस्वामी श्रीतुलसीदासजीने रामभक्तिके द्वारा वास्तवमें परम पवित्र भारतीय जीवन-दर्शन तथा संस्कृतिका दिग्दर्शन कराया है। सभी वैष्णवाचार्योंकी भाँति तुलसीदासजीने भी विभीषणकी शरणागतिपर विशेष प्रकाश डालकर रामभक्तिके मूल सिद्धान्तोंको भलीभाँति स्पष्ट किया है। चाहे कोई कैसा भी अधम पापी, दुराचारी तथा कदाचारी क्यों न हो, भगवान्‌की शरणमें जाते ही उसके सारे दुर्गुण नष्ट हो जाते हैं और उसकी गणना साधुओंमें होने लगती है। इस प्रकार रामभक्तिके प्रभावसे चरित्रमें सुधार होना प्रारम्भ हो जाता है। जैसे वाल्मीकिके जीवनमें महान् सुधार तथा परिवर्तन हुए। तुलसीदासजीके राम सर्वोपरि परमात्मा हैं। इनकी तुलना किसीसे नहीं की जा सकती। रामके प्रेममें मन, बुद्धि, चित्त आदि सब कुछ लगा देना ही मानव-जीवनकी सार्थकता है।

तुलसीदासजीने जीवनका सार्वभौमिक दृष्टिकोण दर्शाते हुए रामभक्तिपर विशेष बल दिया है। और सेवाभावको भक्तिका अनिवार्य अङ्ग सिद्ध किया है। इस प्रसंगमें उनका दिव्य उद्गार देखा जाय—

'सेवक सेब्य भाव बिनु भव न तरिअ उरगारि।'

(रा० च० मा० ७। ११९)

भक्तिका इतिहास भी इस बातका साक्षी है कि जो लोग भगवद्भक्त हैं, उन्होंने इस लोकमें मानवकी सेवा करके ही अपनी भक्ति-भावनाको अभिव्यक्त किया है। विश्वसेवा, जीवसेवा तथा मानवसेवा भक्तिके आवश्यक अङ्ग हैं।

तुलसीदासजीकी रामभक्तिका सिद्धान्त कितना ऊँचा है तथा कितना व्यापक है, विशाल और सूक्ष्म है, यह अनुभव भक्त ही कर सकता है। उनकी रामभक्तिमें ज्ञान, विज्ञान, वैराग्य, चरित्र-निर्माण तथा धर्मशास्त्रकी सारी बातें निहित हैं। उनकी दास्यभक्ति-भावना भी अनूठी है। उनके विचारानुसार इस व्यक्त जगत्‌को रामरूप समझते हुए इसकी सेवा करना दास्यभक्ति है। उन्होंने स्पष्ट ही कहा है—

जड़ चेतन जग जीव जत सकल राममय जानि।
बंदउँ सब के पद कमल सदा जोरि जुग पानि॥

(रा० च० मा० १।७ (ग))

भगवान् श्रीराम एक ओर अपनी भगवत्ताका परिचय देकर भगवद्भक्ति करनेकी प्रेरणा देते हैं और दूसरी ओर अपना आदर्श दिव्य चरित्र प्रस्तुत कर चरित्र-निर्माण करनेका शिक्षण देते हैं। वास्तवमें चरित्र-निर्माण तथा भगवद्भक्ति दो पृथक् वस्तुएँ नहीं हैं, बल्कि ये दोनों एक ही सत्यके दो रूप हैं। ये दोनों एक-दूसरेको प्रभावित करते हैं। मानव-कल्याणके लिये भगवान् अपनी इच्छासे इस धरतीपर अवतार लेते हैं। उनकी भक्तिसे चरित्रमें दिव्यता आती है। यही दिव्य संदेश देने-हेतु तुलसीदासजी कहते हैं—

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार॥

(रा० च० मा० १।१९२)

विप्र, धेनु, सुर, संतका हित मानवोंके नेता चरित्रवान् धर्मस्वरूप श्रीरामके द्वारा ही होता है। ऐसे श्रीरामके शील एवं आदर्श चरित्रके प्रतापसे समाज तथा प्रकृतिकी विषमता मिटती है। समाज, देश तथा विश्वमें सुख-शान्तिकी स्थापना शीलवान् तथा चरित्रवान् व्यक्तियोंपर ही निर्भर करती है। वास्तवमें भगवान् श्रीरामके शील तथा दिव्य चरित्रद्वारा चरित्र-निर्माणकी मूल शिक्षा प्राप्त होती है। शील ही सम्पूर्ण धर्मोंका सार है। कोई भी व्यक्ति अपने शील तथा उदात्त चरित्रके द्वारा ही सच्चा सुख प्राप्त कर सकता है और विश्वमें सुखका साम्राज्य भी स्थापित कर सकता है। भक्तकी शोभा तथा महत्ता उसके दिव्य चरित्रसे ही होती है। जो कार्य भगवान् श्रीरामद्वारा होता है, वही कार्य उनके नामकी साधनाद्वारा होता है, क्योंकि नाम तथा नामीमें अभिन्न सम्बन्ध है। तुलसीदासजीने तो नामकी महत्ता नामीसे भी अधिक बतलायी है—

सबरी गीध सुसेवकनि सुगति दीन्हि रघुनाथ।
नाम उधारे अमित खल बेद बिदित गुन गाथ॥

(रा० च० मा० १।२४)

रामनामके साधकोंका जीवन कैसा होना चाहिये, यह शिक्षा देनेके लिये ही वास्तवमें हनुमान् आदि भक्तोंका चरित्र प्रस्तुत किया गया है। भक्तिके सारे सिद्धान्तोंका प्रयोग चरित्र-निर्माणमें ही करना चाहिये। पुरुषार्थ, शील, सदाचार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदिकी प्रेरणा देनेके लिये ही भक्तोंका चरित्र है। यदि विचार कर देखा जाय तो जीवनमें साधनाका महत्त्व पुरुषार्थका ही महत्त्व है। सच्चे साधकको निष्काम भावनासे साधना करनी चाहिये। परमेश्वर सर्वज्ञ और सर्वसमर्थ है। पुरुषार्थका फल अवश्य प्राप्त होता है, अतः 'राम'-नामकी साधनामें अखण्ड पुरुषार्थ करना चाहिये। रामका नाम तथा रामका कार्य हनुमान्‌जीकी भाँति करना चाहिये। हनुमान्‌जीका पुरुषार्थ दर्शाते हुए वास्तवमें साधकोंको प्रेरणा दी गयी है कि—

जिमि अमोघ रघुपति कर बाना। एही भाँति चलेउ हनुमाना॥

(रा० च० मा० ५।१।८)

राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम।

(रा० च० मा० ५।१)

सांसारिक लोग अर्थ तथा कामकी पूर्तिके लिये पुरुषार्थ करते हैं, लेकिन साधकगण भगवत्प्राप्तिके लिये पुरुषार्थ करते हैं। सच्चे साधककी साधना निष्काम-भावसे ही होती है।

हनुमान्‌जीकी लंका-यात्रा वास्तवमें साधनाकी यात्रा है। साधकोंके जीवनमें लोभ, भय, ईर्ष्या आदि बाधाके रूपमें आते हैं। जैसे कि हनुमान्‌जीके मार्गमें लोभके रूपमें मैनाक पर्वत, भयके रूपमें सुरसा तथा ईर्ष्याके रूपमें लंकिनी आदि तत्त्व बाधक बनकर उपस्थित हुए थे, लेकिन सच्चे भक्त हनुमान्‌जी इन सभी बाधाओंको पार करते हुए लंकापुरी पहुँच जाते हैं।

हनुमान्‌जीकी भाँति रामनामके साधकको विनम्र भी बनना चाहिये। जब हनुमान्‌जी लंकासे सीताजीका समाचार लेकर लौटते हैं और भगवान् श्रीराम उनके महान् कार्योंकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं तो हनुमान्‌जी बड़ी ही विनम्रतासे कहते हैं—

सो सब तव प्रताप रघुराई। नाथ न कछू मोरि प्रभुताई॥

हनुमान्‌जीके जीवनद्वारा रामनामकी साधनाका महत्त्व ही बताया जाता है। रामनामकी अखण्ड साधनामें लगे रहनेके कारण वे ज्ञानियोंमें अग्रगण्य तथा भक्तोंमें शिरोमणि माने जाते हैं और उनका शील-स्वभाव राम-जैसा ही आदर्श है। उनका शील देखकर माता जानकीने उन्हें यह आशीर्वाद भी दिया—

अजर अमर गुननिधि सुत होहू। करहुँ बहुत रघुनायक छोहू॥

यदि भलीभाँति विचार कर देखा जाय तो हनुमान्‌जीका जीवन-दर्शन वास्तवमें भक्तिका दर्शन है। भक्तिकी चरम सीमा उनके जीवनमें दिखायी देती है। भक्ति क्या है, कैसे करनी चाहिये आदिकी प्रेरणा उनके जीवनसे मानवमात्रको प्राप्त होती है।

रामनामकी साधना अनेक रूपोंमें की जाती है और रामनामसे बने अनेक मन्त्र भी हैं। रामनाम विजयरूप है, इसीलिये इसका विशद वैज्ञानिक रूप 'श्रीराम जय राम जय जय राम' शास्त्रानुमोदित रूप है। जिस प्रकार मनुष्योंमें राजाका विशेष महत्त्व है, उसी प्रकार सारे मन्त्रोंमें विजय-मन्त्रका विशेष महत्त्व है। इसका महत्त्व दर्शाते हुए राम-रहस्योपनिषद् (१।५६) में कहा गया है—

श्रीरामेति पदं चोक्त्वा जय राम ततः परम्।
जय द्वयं वदेत् प्राज्ञो रामेति मन्त्रराजकः॥

अर्थात् 'श्रीराम' कहनेके बाद 'जय राम' कहना चाहिये।' तत्पश्चात् दो बार 'जय-जय' बोलकर 'राम' बोलना चाहिये। यही त्रयोदशाक्षर मन्त्र विजयमन्त्र—'मन्त्रराज' कहा जाता है।

आनन्दरामायण, मनोहरकाण्डमें इस विजयमन्त्रका महत्त्व अनेक श्लोकोंमें बताया गया है। कुछ श्लोक इस प्रकार हैं—

श्रीशब्दपूर्वं जयशब्दमध्यं
जयद्वयेनापि पुनः प्रयुक्तम्।
त्रिःसप्त कृत्वा रघुनाथनाम
जपन् निहन्याद् द्विजकोटिहत्याः॥
त्रयोदशाक्षरश्चायं राममन्त्रः शुभावहः।
जपनीयः कीर्तनीयः सर्वदायं मुहुर्मुहुः॥

(सर्ग १५।१०६-१०७)

श्रीरामभक्ति-साधनामें विजयमन्त्रका विशेष महत्त्व है। अपने तथा विश्वकल्याणके लिये इस मन्त्रकी शब्दावलीको सदा स्मरण रखना चाहिये—

जीवनका सर्वोत्तम काम। मुखसे जपना हरिका नाम॥
श्रीराम जय राम जय जय राम। श्रीराम जय राम जय जय राम॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् श्रीसीतारामजीकी युगल उपासना

(स्वामी श्रीसीतारामशरणजी महाराज, लक्ष्मण-किलाधीश)

[विशेषाङ्क पृ० सं० १३९ से आगे]

अयोध्याकाण्डके मङ्गलाचरणमें ही गोस्वामीजीने श्रीसीताजीके युगलस्वरूपकी वन्दना इस प्रकार की है—

नीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्गं
सीतासमारोपितवामभागम्।

भक्ति-रसके आचार्य श्रीभरतलालजीने त्रिवेणीसे प्रार्थना करते हुए इसी वरदानकी याचना की है कि श्रीसीतारामजीके चरणोंमें नवीन अनुराग बढ़ता रहे—

सीता राम चरन रति मोरें। अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरें॥

चित्रकूट पहुँचनेपर श्रीजानकीजीवनकी जय बोलकर सभी अवधवासी दण्ड-प्रणाम करते हैं—

देखि करहिं सब दंड प्रनामा। कहि जय जानकि जीवन रामा॥

अयोध्यावासी नर-नारियोंने गणेश, गौरी, शंकर, विष्णु एवं सूर्य—इन पाँच देवताओंसे श्रीअवधमें श्रीसीतारामजीके अखण्ड साम्राज्यकी कामना की है—

करि मज्जनु पूजहिं नर नारी। गनप गौरि त्रिपुरारि तमारी॥

× × ×

राजा रामु जानकी रानी। आनँद अवधि अवध रजधानी॥

श्रीभरतलालजी चित्रकूटसे लौटकर जब श्रीअवध पधारे तो उन्होंने तपश्चर्या करते हुए युगल-नामकी ही आराधना की—

पुलक गात हियँ सिय रघुबीरू। जीह नामु जप लोचन नीरू॥

अयोध्याकाण्डकी फलश्रुतिमें भी श्रीसीताराम-प्रेमामृत-परिपूर्ण श्रीभरतलालको कहा गया है—

सिय राम प्रेम पियूष पूरन होत जनमु न भरत को।

अरण्यकाण्डमें युगल-सरकारके अनुपम विहारका सांकेतिक वर्णन करते हुए गोस्वामीजीने महर्षि अत्रिकी स्तुतिद्वारा युगल-रूपकी वन्दना करवायी है—

अनूप रूप भूपतिं। नतोऽहमुर्विजा पतिं॥

श्रीशरभंग मुनिने भी सीता-अनुजसहित श्रीरामकी हृदयमें निवासकी याचना की है—

सीता अनुज समेत प्रभु नील जलद तनु स्याम।
मम हियँ बसहु निरंतर सगुनरूप श्रीराम॥

श्रीसुतीक्ष्णजीकी प्रीति भी युगल-रूपमें है, अतः प्रभु श्रीसीतासहित उन्हें दर्शन देते हैं—

आगें देखि राम तन स्यामा। सीता अनुज सहित सुख धामा॥

वर-याचनाके समय श्रीसुतीक्ष्ण मुनि श्रीसहित श्रीरामरूपको हृदयमें निवास करनेकी प्रार्थना करते हैं—

जदपि बिरज ब्यापक अबिनासी। सब के हृदयँ निरंतर बासी॥
तदपि अनुज श्री सहित खरारी। बसतु मनसि मम कानन चारी॥
अनुज जानकी सहित प्रभु चाप बान धर राम।
मम हिय गगन इंदु इव बसहु सदा निहकाम॥

महर्षि अगस्त्य भी युगल-नामके उपासक हैं तथा वरदानमें भी युगलोपासनाका ही स्पष्ट संकेत है—

राम अनुज समेत बैदेही। निसि दिनु देव जपत हहु जेही॥
यह बर मागउँ कृपानिकेता। बसहु हृदयँ श्री अनुज समेता॥

प्रभु श्रीरामने श्रीहनुमान्‌जीद्वारा प्रियाजूको जो संदेश भेजा है, उसमें युगलप्रेम और युगलत्वका वर्णन है। प्रभु कहते हैं—हे प्रिये! मेरे तथा तुम्हारे प्रेमका तत्त्व (गूढ़ रहस्य) एक मेरा मन ही जानता है, सो वह मन भी सदैव तुम्हारे पास ही रहता है। बस इतनेमें ही मेरे प्रेमभावको समझ ले। तात्पर्य यह है कि तुम्हारे बिना मैं दुःखी रहता हूँ। रात-दिन तुममें ही मन लगा रहता है, यह प्रीति-रस है—

तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मनु मोरा॥
सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं। जानु प्रीति रसु एतनेहि माहीं॥

प्रीति-रस अन्योन्याश्रित है। प्रेमी तथा प्रेमास्पद देखनेमें दो शरीरधारी हैं, किंतु प्रीति-रस दोनोंको एक कर देता है। श्रीसीता-रामजीका प्रेमतत्त्व दिव्य एवं अलौकिक है। ऐश्वर्य-प्रधान ब्रह्म तथा आह्लाद-प्रधान ब्रह्म—इन दोनोंका सम्मिलित विग्रह श्रीसीता-राम-युगल है। सच्चिदानन्दमय ब्रह्मकी प्रीति भी सच्चिदानन्दमयी होती है। सभीके वास्तविक प्रेमास्पद तो कृपालु कोसलपाल ही हैं। प्रेमका अहसानमंद (कृतज्ञ) श्रीराघवको छोड़कर और कोई भी नहीं है—

एक सनेही साँचिलो केवल कोसलपाल।
प्रेम कनौड़ो रामसों नहिं दूसरो कृपाल॥

श्रीरघुनाथजी श्रीमैथिली-प्रेम-परतन्त्र हैं तथा श्रीजानकीजी स्वाधीन-भर्तृका अलौकिक नायिका हैं एवं सीमन्तिनी-चूडामणि हैं। दोनोंका प्रेम अनिर्वचनीय है—

सिय राम अवलोकनि परसपर प्रेमु काहु न लखि परै।
मन बुद्धि बर बानी अगोचर प्रगट कबि कैसें करै॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्तशिरोमणि श्रीहनुमान्‌जीके सिरपर प्रभुके कर-कमलका स्पर्श हुआ ***'परसा सीस सरोरुह पानी'***, किंतु जब श्रीजनकनन्दिनी श्रीजानकीजीका अमोघ आशीर्वाद प्राप्त हुआ तभी वे कृतकृत्य हुए—

आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना। होहु तात बल सील निधाना॥

× × ×

अब कृतकृत्य भयउँ मैं माता। आसिष तव अमोघ बिख्याता॥

लंकाकाण्डमें जब श्रीजानकीजी लौकिक कलंकका प्रक्षालनकर श्रीप्रभुके वामभागमें विराजमान हुईं, उस समयकी झाँकीका वर्णन गोस्वामीजीने इस प्रकार किया है—श्रीसीताजी प्रभुके वाम-भागमें विराजित हुईं, उनकी उत्तम शोभा अत्यन्त ही सुन्दर है। मानो नये खिले हुए नीले कमलके पास सोनेके कमलकी कली सुशोभित हो। श्रीजनकनन्दिनीसहित प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी अपरिमिति अपार शोभाको देखकर रीछ-वानर हर्षित हो गये और सुखके सार श्रीरघुनाथजीकी जय बोलने लगे—

सो राम बाम बिभाग राजति रुचिर अति सोभा भली।
नव नील नीरज निकट मानहुँ कनक पंकज की कली॥

× × ×

जनकसुता समेत प्रभु सोभा अमित अपार।
देखि भालु कपि हरषे जय रघुपति सुख सार॥

देवराज इन्द्रने भी श्रीलक्ष्मणकुमार एवं श्रीजानकीजी-सहित प्रभुकी स्तुति करते हुए कहा है कि प्रभो! श्रीजानकीजी और लक्ष्मणकुमारसहित मेरे हृदयमें निवास कीजिये। हे रमानिवास! मुझे अपना दास समझकर अपनी भक्ति दीजिये—

बैदेहि अनुज समेत। मम हृदयँ करहु निकेत॥
मोहि जानिऐ निज दास। दे भक्ति रमानिवास॥

भगवान् शंकर प्रभुकी स्तुति करते हुए कहते हैं—अनुज तथा जानकीजीसहित श्रीराम मेरे हृदयमें निवास करें—

अनुज जानकी सहित निरंतर। बसहु राम नृप मम उर अंतर॥

जब लंकासे प्रभु पुष्पक-विमानपर आरूढ़ होकर श्रीअवधकी ओर चले तो युगलरूपकी झाँकी अलौकिक प्रतीत हो रही थी—

सिंहासन अति उच्च मनोहर। श्री समेत प्रभु बैठे ता पर॥
राजत रामु सहित भामिनी। मेरु सृंग जनु घन दामिनी॥

उत्तरकाण्डमें माताएँ भी युगल-छबिके दर्शनसे परमानन्द प्राप्त करती हैं—

लछिमन अरु सीता सहित प्रभुहि बिलोकति मातु।
परमानंद मगन मन पुनि पुनि पुलकित गातु॥

श्रीसीता-राम-युगलकी राज्याभिषेककी अद्भुत झाँकीका दर्शनकर माताओंने अपने जन्मको सफल माना—

राम बाम दिसि सोभति रमा रूप गुन खानि।
देखि मातु सब हरषीं जन्म सुफल निज जानि॥

मुनिगण भी युगल-रूपका दर्शनकर आनन्दमग्न हैं—

जनकसुता समेत रघुराई। पेखि प्रहरषे मुनि समुदाई॥

श्रीसीताजीसहित सूर्यवंशके विभूषण श्रीरामजीके शरीरमें अनेकों कामदेवकी छबि शोभा दे रही है। नवीन जलयुक्त मेघोंके समान सुन्दर श्याम-शरीरपर पीताम्बर देवताओंके मनको भी मोहित कर रहा है। मुकुट, बाजूबंद आदि विचित्र आभूषण अङ्ग-अङ्गमें सजे हुए हैं। कमलके समान नेत्र, चौड़ी छाती, लंबी भुजाएँ हैं, जो उनके दर्शन करते हैं, वे मनुष्य धन्य हैं—

श्री सहित दिनकर बंस भूषन काम बहु छबि सोहई।
नव अंबुधर बर गात अंबर पीत सुर मन मोहई॥
मुकुटांगदादि बिचित्र भूषन अंग अंगन्हि प्रति सजे।
अंभोज नयन बिसाल उर भुज धन्य नर निरखंति जे॥

वेदमें साक्षात् वेद भगवान्‌ने श्रीयुगल-उपासनाकी पुष्टि की है—

जय प्रनतपाल दयाल प्रभु संजुक्त सक्ति नमामहे॥

हे दयालु शरणागतपालक प्रभो! आपकी जय हो। मैं शक्ति—श्रीसीताजीसहित शक्तिमान् आपको नमस्कार करता हूँ। अयोध्यावासी नर-नारी भी अपने बालकोंको युगलरूपके भजन करनेका उपदेश देते हैं—

जनकसुता समेत रघुबीरहि। कस न भजहु भंजन भव भीरहि॥

भक्तशिरोमणि श्रीकाकभुशुण्डिजी पक्षिराज गरुडजीको सम्पूर्ण रामकथा सुनानेके पश्चात् श्रीसीता-राम-युगल-सरकारके भजनका उपदेश देते हैं।

भाव बस्य भगवान सुख निधान करुना भवन।
तजि ममता मद मान भजिअ सदा सीतारवन॥

भावके वशमें रहनेवाले ऐश्वर्य-पूर्ण, सुखके भण्डार और करुणाके आगार श्रीसीतारमण श्रीजानकीजीके स्वामी भगवान् श्रीरामजीका ममता, मद और अभिमान छोड़कर सदा भजन करना चाहिये, अर्थात् श्रीसीताविशिष्ट श्रीरामजीका भजन करना चाहिये। इस प्रकार मानसमें गोस्वामीजीने युगलोपासनाके सिद्धान्तका दिग्दर्शन कराया है।

(समाप्त)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीमानस-पुरश्चरण-यन्त्र

(परमादरणीय श्रीजानकीशरणजी महाराज 'मधुकर')

किसी उद्देश्यकी सिद्धिके लिये निश्चित संख्या या निश्चित अवधितक नियमपूर्वक जो (मन्त्र-जप या स्तोत्र-पाठ या विग्रह-पूजनरूपी) अनुष्ठान किया जाय, उसे 'पुरश्चरण' कहते हैं। अभीष्टकी सिद्धिके लिये श्रीरामचरितमानसका पाठ प्रायः श्रद्धालु लोग किया करते हैं। श्रीरामचरितमानस-पुरश्चरण-रूपमें एकाह्न-पारायण या नवाह्न-पारायण या मास-पारायण अथवा अष्टोत्तरशत-पारायण करनेवाले साधकोंको पाठारम्भके पूर्व स्नानादिसे निवृत्त होकर शुद्ध स्थानमें शुद्ध आसन बिछाकर बैठ जाना चाहिये। दाहिने हाथमें जल, पुष्प और अक्षत लेकर निम्नलिखित संकल्प पढ़ना चाहिये—

संकल्प—ॐ तत्सदद्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेत-वाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलि-युगे प्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे (अमुक) संवत्सरे (अमुक) मासे (अमुक) पक्षे (अमुक) तिथौ (अमुक) वासरे (अमुक) नामाहं मम सकलाभीष्टसिद्धये श्रीसीता-रामप्रीत्यर्थं च श्रीरामचरितमानसस्य (अमुक) पारायणं करिष्ये।

तदुपरान्त श्रीगणेश-पूजन, गौरी-पूजन तथा कलश-संस्थापन करना चाहिये, जिससे आगत-अनागत सभी विघ्नों-का निवारण हो और अभीष्ट सिद्धि-प्रदायक पुरश्चरण निर्विघ्न सम्पन्न हो।

गणेश-पूजन—श्रीगणेशजीकी पूजाके लिये श्रीगणेश-जीकी मूर्ति या चित्रको स्थापित करना चाहिये अथवा किसी शुद्ध पात्रमें रखे हुए चावलोंपर मोली लपेटी हुई सुपारी रखनी चाहिये। अथवा मानसिक भावना कर लेनी चाहिये। फिर नीचे लिखे मन्त्रके अनुसार श्रीगणेशजीका ध्यान करते हुए एवं आवाहनकी भावना करते हुए अक्षत या पुष्प छोड़ने चाहिये—

गजाननं भूतगणादिसेवितं
कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम् ।
उमासुतं शोकविनाशकारकं
नमामि विघ्नेश्वरपादपङ्कजम् ॥

श्रीगणेशजीको आवाहित करके **'ॐ गं गणपतये नमः'** प्रत्येक बार बोलकर पञ्चोपचार (गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य) से अथवा केवल गन्ध-पुष्प समर्पित करते हुए पूजन करना चाहिये और उनसे प्रार्थना करनी चाहिये—

रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक।
भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात् ॥

गौरी-पूजन—इसी प्रकार जगदम्बा गौरीका पूजन करनेके लिये उनकी मूर्ति या चित्र सामने रख लेना चाहिये अथवा मानसिक भावना कर लेनी चाहिये। फिर जगदम्बा गौरीका ध्यान करते हुए तथा नीचे लिखे मन्त्रसे आवाहन करते हुए लाल पुष्प या अक्षत अर्पित करने चाहिये—

ॐ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन।
ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ॥

जगदम्बा गौरीको आवाहित करके **'ॐ गौं गौर्यै नमः'** प्रत्येक बार बोलकर पञ्चोपचार (गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य) से अथवा केवल गन्ध-पुष्प समर्पित करते हुए पूजन करना चाहिये और उनसे प्रार्थना करनी चाहिये—

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

कलश-संस्थापन—कलशकी स्थापना मानस-पारायण-स्थलीके ईशान (उत्तर-पूर्व) दिशामें करनी चाहिये। शुद्ध भूमिपर रोलीसे अष्टदल कमल बनाकर, उसपर सप्तधान्य (यदि सप्तधान्य न हो तो गेहूँ या चावल) रखकर धान्यके ऊपर कलश स्थापित करे। फिर कलशमें जल, चन्दन, सुपारी और सर्वौषधि छोड़कर उसके ऊपर दूब, पञ्च-पल्लव, पूर्ण-पात्र और श्रीफल (नारियल) रखना चाहिये। तदुपरान्त कलशमें वरुणदेवताका आवाहन करते हुए निम्नलिखित प्रार्थना करनी चाहिये—

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले तस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ॥
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः।
अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा॥
गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् संनिधिं कुरु॥
सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः।
आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः॥

श्रीगणेश-गौरी-कलश-पूजनके उपरान्त साधकको विनियोग, अङ्गन्यास तथा करन्यास करना चाहिये। विनियोग-द्वारा संकल्पका स्पष्टीकरण होता है कि भगवान् श्रीसीतारामकी प्रसन्नता-प्राप्तिके उद्देश्यसे इस अनुष्ठानको किया जा रहा है। उपासनाका सिद्धान्त है कि उपासक अपने अंदर उपास्यकी भावना करके ही उपासना करे—**'देवो भूत्वा यजेद् देवम्।'** इसी सिद्धान्तके अनुसार मन्त्रके अवयवोंका अङ्गन्यासके द्वारा उपासक अपने शरीरके अवयवोंमें न्यास (स्थापना) करता है और उस मन्त्रके विभिन्न अवयवोंको दोनों हाथोंके अवयवोंमें भी न्यास किया जाता है। इसीको 'करन्यास' कहते हैं।

(अ) विनियोग—ॐ अस्य श्रीमन्मानसरामायण-श्रीरामचरितस्य श्रीशिवकाकभुशुण्डियाज्ञवल्क्यगोस्वामि-तुलसीदासा ऋषयः, श्रीसीतारामो देवता, श्रीरामनाम बीजम्, भवरोगहरी भक्तिः शक्तिः, मम नियन्त्रिताशेष-विघ्नतया श्रीसीतारामप्रीतिपूर्वकसकलमनोरथसिद्ध्यर्थं पाठे विनियोगः।

—इसका पाठ करके भूमिपर जल छोड़ दे। इस प्रकार विनियोग करके **'ॐ श्रीं सीतायै नमः, ॐ रां रामाय नमः'** इस युगल-मन्त्रका जप करके आचमन करना चाहिये और इसी मन्त्रसे प्राणायाम करना चाहिये। फिर न्यास-क्रिया करे।

(आ) करन्यास—*(१) 'जग मंगल गुनग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के॥' अङ्गुष्ठाभ्यां नमः* —इसे पढ़कर दोनों हाथोंकी तर्जनी अङ्गुलियोंसे दोनों अँगूठोंका स्पर्श करे।

(२) 'राम राम कहि जे जमुहाहीं। तिन्हहि न पाप पुंज समुहाहीं॥' तर्जनीभ्यां नमः—इसे पढ़कर दोनों अँगूठोंसे दोनों तर्जनी अङ्गुलियोंका स्पर्श करे।

(३) 'राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउ नाथ अघ खग गन बधिका॥' मध्यमाभ्यां नमः—इसे पढ़कर दोनों अँगूठोंसे दोनों मध्यमा अङ्गुलियोंका स्पर्श करे।

(४) 'उमा दारु जोषित की नाईं। सबहि नचावत रामु गोसाईं॥' अनामिकाभ्यां नमः—इसे पढ़कर अँगूठोंसे दोनों अनामिका अङ्गुलियोंका स्पर्श करे।

(५) 'सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं॥' कनिष्ठिकाभ्यां नमः—इसे पढ़कर दोनों अँगूठोंसे कनिष्ठिका अङ्गुलियोंका स्पर्श करे।

(६) 'मामभिरक्षय रघुकुल नायक। धृत बर चाप रुचिर कर सायक॥' करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः—इसे पढ़कर दोनों हाथोंकी हथेलियों एवं उनके पृष्ठभागोंका परस्पर स्पर्श करे।

(इ) अङ्गन्यास—*(१) 'जग मंगल गुनग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के॥' हृदयाय नमः*— इसे पढ़कर दाहिने हाथकी अङ्गुलियोंसे हृदयका स्पर्श करे।

(२) 'राम राम कहि जे जमुहाहीं। तिन्हहि न पाप पुंज समुहाहीं॥' शिरसे स्वाहा—इसे पढ़कर दाहिने हाथकी अङ्गुलियोंसे सिरका स्पर्श करे।

(३) 'राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउ नाथ अघ खग गन बधिका॥' शिखायै वषट्—इसे पढ़कर दाहिने हाथकी अङ्गुलियोंसे शिखाका स्पर्श करे।

(४) 'उमा दारु जोषित की नाईं। सबहि नचावत रामु गोसाईं॥' कवचाय हुम्—इसे पढ़कर दाहिने हाथकी अङ्गुलियोंसे बायें कंधेका स्पर्श और बायें हाथकी अङ्गुलियोंसे दाहिने कंधेका स्पर्श करे।

(५) 'सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं॥' नेत्राभ्यां वौषट्—इसे पढ़कर दाहिने हाथकी अङ्गुलियोंके अग्रभागसे दोनों नेत्रोंका क्रमशः स्पर्श करे।

(६) 'मामभिरक्षय रघुकुल नायक। धृत बर चाप रुचिर कर सायक॥' अस्त्राय फट्—इसे पढ़कर दाहिने हाथको सिरकी बायीं ओरसे आगेकी ओर ले जाकर दाहिनी ओर ले आये और तर्जनी तथा मध्यमा अङ्गुलियोंसे बायें हाथकी हथेलीपर ताली बजा दे।

न्यास-क्रियाके सम्पन्न हो जानेके बाद भगवान् श्रीसीता-रामका ध्यान करना चाहिये। यथा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालाम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं वीरासनाध्यासितं
मुद्रां ज्ञानमयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि।
सीतां पार्श्वगतां सरोरुहकरां विद्युन्निभां राघवं
पश्यन्तीं मुकुटाङ्गदादिविविधाकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे॥

भावार्थ—बायें कर-कमलको घुटनेपर रखकर दाहिनेसे ज्ञानमयी मुद्रा धारण किये हुए, अविरत वीरासनसे विराजमान, श्यामल बादलके समान मञ्जुल कान्तिमान्, मुकुट, अङ्गद आदि विविध भूषाविभूषित, देदीप्यमान, दिव्य अङ्गोंको धारण करनेवाले भगवान् राघवेन्द्र श्रीरामका एवं उनके पार्श्वमें समासीन हो निर्निमेष-नेत्रसे उन्हींको निहारती हुई, बिजलीके समान द्युतिवाली, करकमलधारिणी, धरानन्दिनी भगवती सीताका हम भजन करते हैं।

उपर्युक्त प्रारम्भिक पूजा कर चुकनेके पश्चात् यन्त्रका पूजन करना चाहिये। यन्त्र स्वर्ण-पत्र, रजत-पत्र, ताम्र-पत्र या भोज-पत्रपर बनाया जा सकता है। अथवा बेल, आँवला, पीपल, वट या आम्रके समतल काष्ठपर भी बनाया जा सकता है। यन्त्रको अनार (या चमेली) की लेखनीसे लिखना चाहिये। जैसी सुविधा-व्यवस्था हो, तदनुसार यन्त्र लाल चन्दन, हल्दी, केशर या गोरोचनसे लिखा जा सकता है। यन्त्रपूजनमें यन्त्रस्थ देवी-देवताओंकी पूजा षोडशोपचारसे या पञ्चोपचारसे अथवा गन्ध-पुष्पसे विधिपूर्वक करनी चाहिये। प्रारम्भमें यन्त्रके बहिर्दलस्थ देवी-देवताओंकी पूजा होगी, फिर अन्तःकोणस्थ देवताओंकी और अन्तमें केन्द्रस्थ भगवान् श्रीसीताराम एवं श्रीरामचरितमानसकी पूजा करनी चाहिये।

(क) बहिर्दलस्थ-देवाराधन—यन्त्रमें बाहरके जिस दलपर '**ॐ श्रीगणाधिपतये नमः**' लिखा गया है, उस दलसे पूजा आरम्भ करके दक्षिणकी ओरसे क्रमशः श्रीपार्वतीजी, श्रीनरहरिदासजी आदिकी पूजा करते हुए अन्तमें श्रीब्रह्माजीका पूजन करना चाहिये।

१-ॐ गं गणाधिपतये नमः। गणाधिपतिश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

२-ॐ पां पार्वत्यै नमः। पार्वतीश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

३-ॐ नं नरहरिदासाय नमः। नरहरिदासश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

४-ॐ वां वाल्मीकये नमः। वाल्मीकिश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

५-ॐ सूं सूर्यदेवाय नमः। सूर्यदेवश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

६-ॐ विं विष्णवे नमः। विष्णुश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

७-ॐ धं धनदाय नमः। धनदश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

८-ॐ ब्रं ब्रह्मणे नमः। ब्रह्मश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

(ख) अन्तःकोणस्थ-देवाराधन—यन्त्रके अन्तः-कोणस्थ जिस कोष्ठकमें '**ॐ श्रीहनुमते नमः**' लिखा है, उस कोष्ठकसे पूजा आरम्भ करके दक्षिण ओरसे क्रमशः श्रीअङ्गदजी, श्रीसुग्रीवजी, श्रीयाज्ञवल्क्यजी आदिकी पूजा करते हुए अन्तमें श्रीगोस्वामी तुलसीदासजीकी पूजा करनी चाहिये।

९-ॐ हं हनुमते नमः। हनुमच्छ्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

१०-ॐ अं अङ्गदाय नमः। अङ्गदश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

११-ॐ सुं सुग्रीवाय नमः। सुग्रीवश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

१२-ॐ यां याज्ञवल्क्याय नमः। याज्ञवल्क्य-श्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

१३-ॐ लं लक्ष्मणाय नमः। लक्ष्मणश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

१४-ॐ शिं शिवाय नमः। शिवश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

१५-ॐ भं भरताय नमः। भरतश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

१६-ॐ विं विभीषणाय नमः। विभीषणश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

१७-ॐ शं शत्रुघ्नाय नमः। शत्रुघ्नश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

१८-ॐ कां काकभुशुण्डये नमः। काकभुशुण्डि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

१९-ॐ जां जाम्बवते नमः। जाम्बवच्छ्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

२०-ॐ गों गोस्वामितुलसीदासाय नमः। गोस्वामितुलसीदासश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः।

(ग) केन्द्रस्थ-देवाराधन—अन्तमें यन्त्रके केन्द्रमें स्थित भगवान् श्रीसीताराम तथा श्रीरामचरितमानसकी पूजा करनी चाहिये।

भगवान् श्रीसीतारामका षोडशोपचार या पञ्चोपचार या गन्ध-पुष्पसे पूजन करना चाहिये।

२२- 'ॐ रां रामचरितमानसरामायणाय नमः। रामचरितमानसश्रीपादुकां पूजयामि, तर्पयामि नमः'—इस मन्त्रसे यन्त्र-केन्द्रस्थ श्रीमन्मानसरामायणकी और इसीके साथ-साथ जिस ग्रन्थसे मानस-पारायण-पुरश्चरण किया जाय, उस ग्रन्थकी भी षोडशोपचार या पञ्चोपचार या गन्ध-पुष्पसे पूजा करनी चाहिये।

मानस-पुरश्चरण-यन्त्र

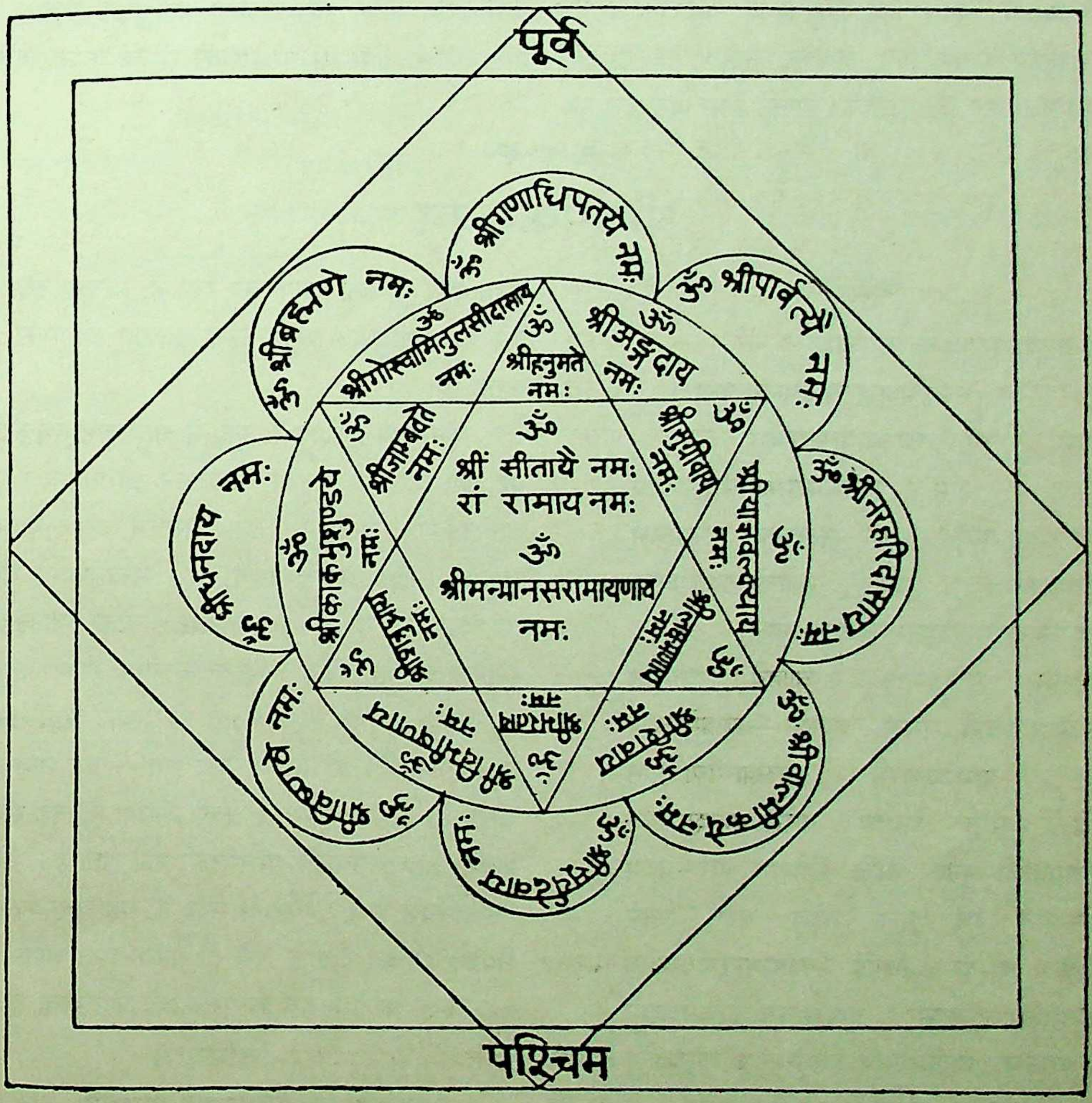

२१-'ॐ श्रीं सीतायै नमः, ॐ रां रामाय नमः। सीतारामश्रीपादुके पूजयामि, तर्पयामि नमः'—इस मन्त्रसे

इस तरह यन्त्रस्थ देवी-देवताओंकी पूजा करके निम्नलिखित प्रार्थना करनी चाहिये—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्॥
यन्मायावशवर्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवासुरा
यत्सत्त्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथाहेर्भ्रमः।
यत्पादप्लवमेकमेव हि भवाम्भोधेस्तितीर्षावतां
वन्देऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम्॥
गिरा अरथ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न।
बंदउँ सीता राम पद जिन्हहि परम प्रिय खिन्न॥
मो सम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुबीर।
अस बिचारि रघुबंस मनि हरहु बिषम भव भीर॥

इस प्रकार प्रत्येक दिन, जबतक पुरश्चरण चलता रहे, पाठके पूर्व पूजा कर लेनी चाहिये। अन्तमें जिस दिन पाठ पूरा हो रहा हो, उस दिन भी इन सभी देवताओंके लिये उनके-उनके मन्त्रसे आहुतियाँ दी जानी चाहिये और प्रधान देवता भगवान् श्रीसीतारामजीके लिये उनके '**ॐ श्रीं सीतायै नमः ॐ रां रामाय नमः**'—इस युगल-मन्त्रसे कम-से-कम १०८ आहुतियाँ दी जानी चाहिये। हवनके लिये तैयार किये गये शाकल्यमें तिल, जौ, चावल, शर्कराके अतिरिक्त कपूर, चन्दन-चूर्ण आदि सुगन्धित पदार्थ भी मिश्रित कर लेने चाहिये। फिर दशांश तर्पण एवं उसका भी दशांश मार्जन करके श्रीमानसजीकी आरती करनी चाहिये। सबसे अन्तमें 'भगवान् श्रीसीताराम अपने परिकरोंसहित यहाँ नित्य निवास करें'—ऐसा कहकर श्रीमानस-पुरश्चरणको सम्पन्न करना चाहिये।

श्रीरामकवचम्

वन्दना

आजानुबाहुमरविन्ददलायताक्ष-
माजन्मशुद्धरसहासमुखप्रसादम्।
श्यामं गृहीतशरचापमुदाररूपं
रामं सराममभिराममनुस्मरामि॥
शृणु वक्ष्याम्यहं सर्वं सुतीक्ष्ण मुनिसत्तम।
श्रीरामकवचं पुण्यं सर्वकामप्रदायकम्॥
अद्वैतानन्दचैतन्यशुद्धसत्त्वैकलक्षणः।
बहिरन्तः सुतीक्ष्णात्र रामचन्द्रः प्रकाशते॥
तत्त्वविद्यार्थिनो नित्यं रमन्ते चित्सुखात्मनि।
इति रामपदेनासौ परब्रह्माभिधीयते॥
जय रामेति यन्नाम कीर्तयन्नभिवर्णयेत्।
सर्वपापैर्विनिर्मुक्तो याति विष्णोः परं पदम्॥
श्रीरामेति परं मन्त्रं तदेव परमं पदम्।
तदेव तारकं विद्धि जन्ममृत्युभयापहम्।
श्रीरामेति वदन् ब्रह्मभावमाप्नोत्यसंशयम्॥

(अगस्त्यजी सुतीक्ष्णसे कहते हैं—) 'जानुपर्यन्त जिनकी बाहुएँ हैं, कमलदलके समान जिनके विस्तृत नेत्र हैं, जन्मसे ही जिनके मुखपर निष्कपट आनन्दसूचक हास्यके रूपमें प्रसन्नता झलकती रहती है, जिनका सलोना साँवला वर्ण है, जिन्होंने धनुष और बाणको धारण कर रखा है, जिनका उदार रूप है, ऐसे परमसुखदायक सीतासहित भगवान् श्रीरामका मैं ध्यान करता हूँ।

मुनिसत्तम सुतीक्ष्ण! सुनो, मैं आज तुम्हें सब कामनाओं-को पूर्ण करनेवाला तथा परमपावन श्रीरामकवच पूर्णरूपसे बतलाऊँगा। सुतीक्ष्ण! इस संसारमें बाहर-भीतर—सब स्थानोंमें अद्वैत आनन्दस्वरूप, शुद्ध सत्त्वगुणमय रामचन्द्रजी प्रकाशित हो रहे हैं। परमात्माके तत्त्वको जाननेकी इच्छा रखनेवाले लोग जिन चिदानन्दस्वरूपमें रमण करते हैं—आनन्दका अनुभव करते हैं, वे ही परब्रह्म 'राम' इस नामसे पुकारे जाते हैं। जो मनुष्य 'जय राम'—इस नामका कीर्तन करता है, अथवा दूसरोंको श्रवण कराता है, वह सब पापोंसे छूटकर विष्णुभगवान्के परमपदको प्राप्त होता है। 'श्रीराम'—यह सर्वश्रेष्ठ मन्त्र है, यही परमपद है, यह जन्म-मृत्यु आदिके भयको दूर कर देता है, इसे ही तारक-मन्त्र जानो। 'श्रीराम' कहनेवाला प्राणी निश्चय ही परब्रह्मको प्राप्त होता है।'

विनियोग

अस्य श्रीरामकवचस्य अगस्त्य ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, सीतालक्ष्मणोपेतः श्रीरामचन्द्रो देवता, श्रीरामचन्द्रप्रसाद-सिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यानम्

अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि सर्वाभीष्टफलप्रदम्।
नीलजीमूतसंकाशं विद्युद्वर्णाम्बरावृतम्॥
कोमलाङ्गं विशालाक्षं युवानमतिसुन्दरम्।
सीतासौमित्रिसहितं जटामुकुटधारिणम्॥
सासितूणधनुर्बाणपाणिं दानवमर्दनम्।
सदा चोरभये राजभये शत्रुभये तथा॥
ध्यात्वा रघुपतिं युद्धे कालानलसमप्रभम्।
चीरकृष्णाजिनधरं भस्मोद्धूलितविग्रहम्॥
आकर्णाकृष्टसशरकोदण्डभुजमण्डितम्।
रणे रिपून् रावणादींस्तीक्ष्णमार्गणवृष्टिभिः॥
संहरन्तं महावीरमुग्रमैन्द्ररथस्थितम्।
लक्ष्मणाद्यैर्महावीरैर्वृतं हनुमदादिभिः॥
सुग्रीवाद्यैर्महावीरैः शैलवृक्षकरोद्यतैः।
वेगात् करालहुंकारैर्भुभुक्कारमहारवैः॥
नदद्भिः परिवादद्भिः समरे रावणं प्रति।
श्रीराम शत्रुसंघान् मे हन मर्दय खादय॥
भूतप्रेतपिशाचादीन् श्रीरामाशु विनाशय।
एवं ध्यात्वा जपेद्रामकवचं सिद्धिदायकम्॥

अब सब कामनाओंको पूर्ण करनेवाला ध्यान बतला रहा हूँ। जिनका नील मेघके समान श्याम शरीर है, जो बिजलीके समान चमकते हुए पीले वस्त्रको धारण किये हैं, जिनके कोमल अङ्ग हैं, बड़ी-बड़ी आँखें हैं, जो अतिशय सुन्दर और युवा हैं, जिनके साथ सीता और लक्ष्मण विद्यमान हैं, जो जटा-मुकुट धारण किये हैं, तलवार, तरकश, धनुष और बाण हाथमें लिये हैं और दानवोंका संहार करते हैं। (मैं उनका ध्यान करता हूँ), मनुष्यको चाहिये कि राजभय, चोरभय और शत्रुका भय आ जाय तो युद्ध-कालमें कालानलके समान प्रचण्ड प्रभाशाली रामचन्द्रजीका इस रूपमें ध्यान करे। वे वल्कल-वस्त्र तथा कृष्णमृगचर्म धारण किये हैं और उनका शरीर भस्मसे धूसरित हो रहा है। उनकी भुजाएँ कानतक खिंचे हुए बाणसहित धनुषसे सुशोभित हैं। वे संग्रामभूमिमें रावण आदि शत्रुओंका तीक्ष्ण बाणवृष्टिद्वारा संहार कर रहे हैं। उस समय वे महान् शक्तिसम्पन्न उग्र रूप धारण किये हैं और इन्द्रके रथपर बैठे हैं। लक्ष्मण और हनुमान्जी आदि श्रेष्ठ वीरोंसे वे घिरे हुए हैं तथा उनके साथ सुग्रीव आदि योद्धा हाथमें पाषाण-खण्ड और बड़े-बड़े वृक्ष लिये हुए प्रचण्ड वेगसे भुभुकारयुक्त कराल हुंकारके साथ उच्चस्वरसे दहाड़ते हुए युद्धमें रावणपर आक्रमण कर रहे हैं। पुनः श्रीरामसे इस प्रकार प्रार्थना करे—'हे राम! मेरे शत्रुगणोंको मार डालो, नष्ट कर दो, खा जाओ और भूत, प्रेत, पिशाच आदिको शीघ्र ही नष्ट कर दो।' इस प्रकार रामचन्द्रजीका ध्यान (और उनसे प्रार्थना) करके निम्नाङ्कित सिद्धिदायक रामकवचका जप करना चाहिये।'

स्तोत्रम्

सुतीक्ष्ण वज्रकवचं शृणु वक्ष्याम्यनुत्तमम्।
श्रीरामः पातु मे मूर्ध्नि पूर्वे च रघुवंशजः॥
दक्षिणे मे रघुवरः पश्चिमे पातु पावनः।
उत्तरे मे रघुपतिः पायाद्दशरथात्मजः॥
भ्रुवोर्दूर्वादलश्यामस्तयोर्मध्ये जनार्दनः।
श्रोत्रे मे पातु राजेन्द्रो दृशौ राजीवलोचनः॥
घ्राणं मे पातु राजर्षिर्गण्डौ मे जानकीपतिः।
कर्णमूले खरध्वंसी भालं मे रघुवल्लभः॥
जिह्वां मे वाक्पतिः पातु दन्तवल्ल्यौ रघूत्तमः।
ओष्ठौ श्रीरामचन्द्रो मे मुखं पातु परात्परः॥
कण्ठं पातु जगद्वन्द्यः स्कन्धौ मे रावणान्तकः।
धनुर्बाणधरः पातु भुजौ मे वालिमर्दनः॥
सर्वाण्यङ्गुलिपर्वाणि हस्तौ मे राक्षसान्तकः।
वक्षो मे पातु काकुत्स्थः पातु मे हृदयं हरिः॥
स्तनौ सीतापतिः पातु पार्श्वे मे जगदीश्वरः।
मध्यं मे पातु लक्ष्मीशो नाभिं मे रघुनायकः॥
कौसल्येयः कटिं पातु पृष्ठं दुर्गतिनाशनः।
गुह्यं पातु हृषीकेशः सक्थिनी सत्यविक्रमः॥
ऊरू शार्ङ्गधरः पातु जानुनी हनुमत्प्रियः।
जङ्घे पातु जगद्व्यापी पादौ मे ताटकान्तकः॥
सर्वाङ्गं पातु मे विष्णुः सर्वसंधीननामयः।
ज्ञानेन्द्रियाणि प्राणादीन् पातु मे मधुसूदनः॥
पातु श्रीरामभद्रो मे शब्दादीन् विषयानपि।
द्विपदादीनि भूतानि मत्सम्बन्धीनि यानि च॥
जामदग्न्यमहादर्पदलनः पातु तानि मे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौमित्रिपूर्वजः पातु वागादीनीन्द्रियाणि च ॥
रोमाङ्कुराण्यशेषाणि पातु सुग्रीवराज्यदः ।
वाङ्मनोबुद्ध्यहंकारैर्ज्ञानाज्ञानकृतानि च ॥
जन्मान्तरकृतानीह पापानि विविधानि च ।
तानि सर्वाणि दग्ध्वाशु हरकोदण्डखण्डनः ॥
पातु मां सर्वतो रामः शार्ङ्गबाणधरः सदा ।

(अगस्त्यजी कहते हैं—) 'सुतीक्ष्ण ! मैं परमोत्तम वज्रकवचका वर्णन करता हूँ, सुनो। श्रीराम मेरे मस्तकपर छत्रच्छाया रखें और रघुवंशजन्मा पूर्व दिशामें मेरी रक्षा करें। दक्षिण दिशामें रघुवर, पश्चिममें पावन और उत्तरमें दशरथात्मज रघुपति मेरी रक्षा करें। दोनों भौंहोंपर दूर्वादलश्याम तथा उनके मध्यभागपर जनार्दन छत्रच्छाया रखें। मेरे कानोंकी राजेन्द्र और नेत्रोंकी राजीवलोचन रक्षा करें। मेरी नासिकाकी राजर्षि, मेरे गण्डस्थलोंकी जानकीपति, दोनों कर्णमूलोंकी खरध्वंसी और मेरे भालकी रघुवल्लभ रक्षा करें। मेरी जिह्वाकी वाक्पति और दोनों दन्तपंक्तियोंकी रघूत्तम रक्षा करें। मेरे होठोंकी श्रीरामचन्द्र और मुखकी परात्पर रक्षा करें। मेरे कण्ठकी जगद्वन्द्य और दोनों कंधोंकी रावणनाशक (रावणका विनाश करनेवाले) रक्षा करें। धनुर्बाणधर मेरी बाहुकी रक्षा करें, वालिमर्दन अँगुलियोंकी सभी गाँठोंकी तथा राक्षसान्तक (राक्षसोंके काल) मेरे हाथोंकी रक्षा करें। काकुत्स्थ मेरे वक्षःस्थलकी रक्षा करें और हरि मेरे हृदयकी रक्षा करें। मेरे दोनों स्तनोंकी सीतापति और दोनों पार्श्वभागोंकी जगदीश्वर रक्षा करें। मेरे मध्यभागकी लक्ष्मीश और मेरी नाभिकी रघुनायक रक्षा करें। कटिभागकी कौसल्यानन्दन और पृष्ठभागकी दुर्गतिनाशन रक्षा करें। गुह्य (गोपनीय) भागकी हृषीकेश और सक्थियों (जाँघकी हड्डियों) की सत्यविक्रम रक्षा करें। ऊरुओंकी रक्षा शार्ङ्गधर और घुटनोंकी रक्षा हनुमत्प्रिय करें। मेरी पिंडलियोंकी जगद्व्यापी और पैरोंकी ताटकावधकर्ता (ताटकाके काल) रक्षा करें। मेरे सभी अङ्गोंकी विष्णु और सम्पूर्ण संधियों (जोड़ों) की अनामय रक्षा करें। मेरी ज्ञानेन्द्रियों तथा प्राणोंकी रक्षा मधुविनाशक करें। श्रीरामभद्र मेरे शब्दादि विषयोंकी भी रक्षा करें। मुझसे सम्बन्ध रखनेवाले जितने दो पैरवाले प्राणी हों, उन सबकी रक्षा जामदग्न्यमहादर्पदलन (परशुरामके महान् दर्पको चूर्ण करनेवाले श्रीराम) करें। सौमित्रिपूर्वज (लक्ष्मणके बड़े भाई) मेरी वाक् आदि इन्द्रियोंकी रक्षा करें। मेरे सारे रोमकूपोंकी सुग्रीवराज्यद (सुग्रीवको राज्य देनेवाले) रक्षा करें। मन, वचन, बुद्धि और अहंकारद्वारा जानमें अथवा अनजानमें किये हुए इस जन्मके अथवा जन्मान्तरके जो मेरे अनेकविध पाप हैं, उन सबको शीघ्र ही भस्म करके हरकोदण्डखण्डन (शिवजीके धनुषको तोड़नेवाले) मेरी सब दिशाओंमें रक्षा करें। शार्ङ्गधनुष और बाण धारण करनेवाले श्रीराम सदा मेरी रक्षा करें।'

इति श्रीरामचन्द्रस्य कवचं वज्रसम्मितम् ॥
गुह्याद्गुह्यतमं दिव्यं सुतीक्ष्ण मुनिसत्तम ।
यः पठेच्छृणुयाद्वापि श्रावयेद्यः समाहितः ॥
स याति परमं स्थानं रामचन्द्रप्रसादतः ।
महापातकयुक्तो वा गोघ्नो वा भ्रूणहा तथा ॥
श्रीरामचन्द्रकवचपठनाच्छुद्धिमाप्नुयात् ।
ब्रह्महत्यादिभिः पापैर्मुच्यते नात्र संशयः ॥
भोः सुतीक्ष्ण यथा पृष्टं त्वया मम पुरा शुभम् ।
तथा श्रीरामकवचं मया ते विनिवेदितम् ॥

मुनिश्रेष्ठ सुतीक्ष्ण ! श्रीरामचन्द्रजीका यह दिव्य कवच वज्रतुल्य तथा गुह्यसे भी परम गुह्य है। जो मन लगाकर इसे पढ़ता है, सुनता है अथवा दूसरोंसे कहता है, वह श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे परमधामको प्राप्त करता है। चाहे वह महापातकी, गोघाती अथवा गर्भस्थ बालककी हत्या करनेवाला ही क्यों न हो, इस श्रीरामचन्द्रके कवचके पाठसे वह शुद्ध हो जाता है—यहाँतक कि ब्रह्महत्या-जैसे पापोंसे भी उसे छुटकारा मिल जाता है, इसमें तनिक भी संशय नहीं है। हे सुतीक्ष्ण ! जिस प्रकार जैसा पहले तुमने मुझसे पूछा था, उसी प्रकार मङ्गलकारक श्रीराम-कवच मैंने तुम्हें बतला दिया।' (आनन्दरामायण, मनोहरकाण्ड, १३)

सब बिधि समरथ सकल कह सहि साँसति दिन राति ।
भलो निबाहेउ सुनि समुझि स्वामिधर्म सब भाँति ॥

(दोहावली, २०४)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् श्रीरामका नित्यधाम—साकेत

(डॉ० श्रीस्वर्णकिरणजी)

साकेत अयोध्याका पर्याय है, जहाँका वातावरण अतिशय पवित्र है, जो भगवान् श्रीरामकी जन्मभूमि है, क्रीडा-भूमि है और लीलाभूमि है। अन्य लोगोंके लिये—विशेषतः भक्तोंके लिये तीर्थभूमि है, आनन्दभूमि है।

गोस्वामी तुलसीदासने साकेतका वर्णन करते हुए कहा है—

मज्जहिं सज्जन बृंद बहु पावन सरजू नीर।
जपहिं राम धरि ध्यान उर सुंदर स्याम सरीर॥
दरस परस मज्जन अरु पाना। हरइ पाप कह बेद पुराना॥
नदी पुनीत अमित महिमा अति। कहि न सकइ सारदा बिमलमति॥
राम धामदा पुरी सुहावनि। लोक समस्त बिदित अति पावनि॥
चारि खानि जग जीव अपारा। अवध तजें तनु नहिं संसारा॥
सब बिधि पुरी मनोहर जानी। सकल सिद्धिप्रद मंगल खानी॥

(रा० च० मा० १। ३४; ३५। १—५)

अर्थात् साकेतमें पवित्र सरयू नदी सुलभ है। यहाँ अनेक सज्जन लोग इस नदीमें स्नान करते हैं और सुन्दर श्यामल शरीरवाले श्रीरामका ध्यान करते हैं। सरयू नदीके जलका दर्शन, स्पर्श, मज्जन (सरयू नदीमें स्नान) एवं पान (सरयू नदीका जल पीना) पापहारी है, पापको शमित करता है, ऐसा वेद एवं पुराण कहते हैं। पवित्र सरयू नदीकी अधिक महिमा है, इसे विमलमति, विमल बुद्धिवाली शारदाजी कह सकनेमें समर्थ नहीं। रामका यह धाम है, यह नगरी बहुत सुहावन है, समस्त लोकोंमें पावन है, जीवोंको यहाँ चारों फल—अर्थ, धर्म, काम एवं मोक्षकी प्राप्ति होती है, यहाँ शरीर त्याग करनेपर चौरासी लाख योनियोंमें भटकना नहीं पड़ता—मुक्ति मिल जाती है। सब प्रकारकी सिद्धियाँ यह नगरी देती है, यह मङ्गलकी खान है।

संक्षेपमें साकेत मनुष्यमात्रके लिये उपयोगी एवं आकर्षणका केन्द्र है। श्रीरामका यह नित्यधाम है, प्रभु यहाँ स्थायी रूपसे रहते हैं। पर प्रश्न उठता है कि जब भगवान् श्रीराम परब्रह्म परमेश्वर हैं, जगत्के प्रकाशक हैं, संसारके नियन्त्रक हैं, सम्पूर्ण संसारको परिचालित करते हैं तो इनका नित्यधाम केवल भौगोलिक स्थान-विशेष एकमात्र साकेत—अयोध्या ही कैसे हो सकता है? भगवान् शंकरने पार्वतीको सम्बोधित कर एक स्थानपर कहा है कि—

देस काल दिसि बिदिसिहु माहीं। कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं॥

(रा० च० मा० १। १८५। ६)

अर्थात् देश, काल, दिशा, विदिशाके बीच ऐसा कौन स्थान है, जहाँ प्रभु श्रीरामका निवास-स्थान, नित्यधाम नहीं है? दूसरे शब्दोंमें हम कह सकते हैं कि भगवान् श्रीरामका नित्यधाम, नित्य निवास-स्थान देश-कालातीत है, ये भगवान् श्रीराम किसी बन्धनमें बँधनेवाले नहीं, इनके लिये कहीं रोक-टोक नहीं। कोई स्थान दुर्गम या अगम नहीं, कोई स्थान इनसे विरहित नहीं, रिक्त स्थानमें भी ये तदाकारवत् विराजमान हैं। वे प्रत्येक पदार्थमें अवस्थित हैं, प्रत्येक पदार्थ उन्हींका प्रतिरूप है।

भगवान् श्रीराम वास्तवमें मनुष्यमात्रकी भक्ति-भावनाके भूखे हैं, निश्छल-निष्कपट व्यक्तिके अधिक समीप हैं। पशु-पक्षी आदिमें यदि सेवा-भावना है, भक्तिकी ओर झुकाव है, समर्पणशीलता है तो भगवान् श्रीराम उनसे भी प्यार करते हैं, उनके समीप रहते हैं, उनकी रक्षा करते हैं। चाहे मनुष्य हो या मनुष्येतर—सभीमें इनका निवास है, इनका नित्यधाम है। गोस्वामी तुलसीदासका कथन है—

राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अबिगत अलख अनादि अनूपा॥
सकल बिकार रहित गतभेदा। कहि नित नेति निरूपहिं बेदा॥
भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर हित लागि कृपाल।
करत चरित धरि मनुज तनु सुनत मिटहिं जग जाल॥

(रा० च० मा० २। ९३। ७-८; ९३)

अर्थात् श्रीराम ब्रह्म हैं, परमार्थरूप हैं, अविगत, अलख, अनादि एवं अनूप हैं। सब प्रकारके विकारोंसे रहित हैं, भेद-भावसे ऊपर हैं, वेद उन्हें 'नेति-नेति' कहते हैं। भक्त, भूमि, भूसुर, भूदेवता, ब्राह्मण, सुरभि एवं देवता लोगोंके लिये कृपालु हैं, मनुष्यका रूप धारण कर लीला करते हैं, जिसे सुननेसे जग-जाल—संसारके जालका विनाश हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाल्मीकिके आश्रममें भगवान् श्रीराम जब वाल्मीकि मुनिसे अपने निवास-स्थानके बारेमें पूछते हैं तो वाल्मीकि मुनि संकोचमें पड़ जाते हैं—

पूँछेहु मोहि कि रहौं कहँ मैं पूँछत सकुचाउँ।
जहँ न होहु तहँ देहु कहि तुम्हहि देखावौं ठाउँ॥

(रा० च० मा० २।१२७)

अर्थात् भगवान् श्रीराम कहाँ रहें—यह कहते हुए मुझे संकोचका अनुभव होता है। क्या कोई ऐसा भी स्थान है जहाँ आप नहीं रहते हों। मुनिके ऐसे प्रेमरससे सने हुए वचन सुनकर भगवान् श्रीराम मुसकराने लगे। इसपर वाल्मीकि मुनिने भगवान्‌के निवासके योग्य स्थानोंको बतलाते हुए कहा—

'जिनके कान समुद्रकी भाँति आपकी सुन्दर कथारूपी अनेकों सुन्दर नदियोंसे निरन्तर भरते रहते हैं, परंतु कभी पूरे (तृप्त) नहीं होते, उनके हृदय आपके लिये सुन्दर घर हैं और जिन्होंने अपने नेत्रोंको चातक बना रखा है, जो आपके दर्शन-रूपी मेघके लिये सदा लालायित रहते हैं; तथा जो भारी-भारी नदियों, समुद्रों और झीलोंका निरादर करते हैं और आपके सौन्दर्य [रूपी मेघ] के एक बूँद जलसे सुखी हो जाते हैं (अर्थात् आपके दिव्य सच्चिदानन्दमय स्वरूपके किसी एक अङ्गकी जरा-सी भी झाँकीके सामने स्थूल, सूक्ष्म और कारण तीनों जगत्‌के अर्थात् पृथ्वी, स्वर्ग और ब्रह्मलोकतकके सौन्दर्यका तिरस्कार करते हैं), हे रघुनाथजी! उन लोगोंके हृदयरूपी सुखदायी भवनोंमें आप, भाई लक्ष्मणजी और सीताजीसहित निवास कीजिये। आपके यशरूपी निर्मल मानसरोवरमें जिसकी जीभ हंसिनी बनी हुई आपके गुण-समूहरूपी मोतियोंको चुगती रहती है, हे रामजी! आप उसके हृदयमें बसिये। जिसकी नासिका प्रभु (आप) के पवित्र और सुगन्धित [पुष्पादि] सुन्दर प्रसादको नित्य आदरके साथ ग्रहण करती (सूँघती) है; और जो आपको अर्पण करके भोजन करते हैं और आपके प्रसादरूप ही वस्त्राभूषण धारण करते हैं; जिनके मस्तक देवता, गुरु और ब्राह्मणोंको देखकर बड़ी नम्रताके साथ प्रेमसहित झुक जाते हैं, जिनके हाथ नित्य श्रीरामचन्द्रजी (आप) के चरणोंकी पूजा करते हैं और जिनके हृदयमें श्रीरामचन्द्रजी (आप) का ही भरोसा है, दूसरा नहीं; तथा जिनके चरण श्रीरामचन्द्रजी (आप) के तीर्थोंमें चलकर जाते हैं, हे रामजी! आप उनके मनमें निवास कीजिये। जो नित्य आपके [रामनामरूप] मन्त्रराजको जपते हैं और परिवार (परिकर) सहित आपकी पूजा करते हैं, जो अनेकों प्रकारसे तर्पण और हवन करते हैं तथा ब्राह्मणोंको भोजन कराकर बहुत दान देते हैं तथा जो गुरुको हृदयमें आपसे भी अधिक (बड़ा) जानकर सर्वभावसे सम्मान करके उनकी सेवा करते हैं; और ये सब कर्म करके सबका एकमात्र यही फल माँगते हैं कि श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें हमारी प्रीति हो, उन लोगोंके मनरूपी मन्दिरोंमें सीताजी और रघुकुलको आनन्दित करनेवाले आप दोनों बसिये। जिनके न तो काम, क्रोध, मद, अभिमान और मोह है, न लोभ है, न क्षोभ है; न राग है, न द्वेष है और न कपट, दम्भ और माया ही है—हे रघुराज! आप उनके हृदयमें निवास कीजिये। जो सबके प्रिय और सबका हित करनेवाले हैं, जिन्हें दुःख और सुख तथा प्रशंसा (बड़ाई) और गाली (निन्दा) समान हैं, जो विचारकर सत्य और प्रिय वचन बोलते हैं तथा जो जागते-सोते आपकी ही शरण हैं, और आपको छोड़कर जिनके दूसरी कोई गति (आश्रय) नहीं है, हे रामजी! आप उनके मनमें बसिये। जो परायी स्त्रीको जन्म देनेवाली माताके समान जानते हैं और पराया धन जिन्हें विषसे भी भारी विष है; जो दूसरेकी सम्पत्ति देखकर हर्षित होते हैं और दूसरेकी विपत्ति देखकर विशेषरूपसे दुखी होते हैं; और हे रामजी! जिन्हें आप प्राणोंके समान प्यारे हैं, उनके मन आपके रहने योग्य शुभ भवन हैं। हे तात! जिनके स्वामी, सखा, पिता, माता और गुरु सब कुछ आप ही हैं, उनके मनरूपी मन्दिरमें सीतासहित आप दोनों भाई निवास कीजिये। जो अवगुणोंको छोड़कर सबके गुणोंको ग्रहण करते हैं, ब्राह्मण और गौके लिये संकट सहते हैं, नीति-निपुणतामें जिनकी जगत्‌में मर्यादा है, उनका सुन्दर मन आपका घर है। जो गुणोंको आपका और दोषोंको अपना समझता है, जिसे सब प्रकारसे आपका ही भरोसा है और रामभक्त जिसे प्यारे लगते हैं, उसके हृदयमें आप सीतासहित निवास कीजिये। जाति, पाँति, धन, धर्म, बड़ाई, प्यारा परिवार और सुख देनेवाला घर—सबको छोड़कर जो केवल आपको ही हृदयमें धारण किये रहता है, हे रघुनाथजी! आप उसके हृदयमें रहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वर्ग, नरक और मोक्ष जिसकी दृष्टिमें समान हैं, क्योंकि वह जहाँ-तहाँ (सब जगह) केवल धनुष-बाण धारण किये आपको ही देखता है; और जो कर्मसे, वचनसे और मनसे आपका दास है; हे रामजी! आप उसके हृदयमें डेरा कीजिये। जिसको कभी कुछ भी नहीं चाहिये और जिसका आपसे स्वाभाविक प्रेम है, आप उसके मनमें निरन्तर निवास कीजिये; वह आपका अपना घर है।' मानसके मूल वचन इस प्रकार हैं—

जिन्ह के श्रवन समुद्र समाना। कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना॥
भरहिं निरंतर होहिं न पूरे। तिन्ह के हिय तुम्ह कहुँ गृह रूरे॥
लोचन चातक जिन्ह करि राखे। रहहिं दरस जलधर अभिलाषे॥
निदरहिं सरित सिंधु सर भारी। रूप बिंदु जल होहिं सुखारी॥
तिन्ह कें हृदय सदन सुखदायक। बसहु बंधु सिय सह रघुनायक॥
जसु तुम्हार मानस बिमल हंसिनि जीहा जासु।
मुकताहल गुन गन चुनइ राम बसहु हियँ तासु॥
प्रभु प्रसाद सुचि सुभग सुबासा। सादर जासु लहइ नित नासा॥
तुम्हहि निबेदित भोजन करहीं। प्रभु प्रसाद पट भूषन धरहीं॥
सीस नवहिं सुर गुरु द्विज देखी। प्रीति सहित करि बिनय बिसेषी॥
कर नित करहिं राम पद पूजा। राम भरोस हृदयँ नहिं दूजा॥
चरन राम तीरथ चलि जाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं॥
मंत्रराजु नित जपहिं तुम्हारा। पूजहिं तुम्हहि सहित परिवारा॥
तरपन होम करहिं बिधि नाना। बिप्र जेवाँइ देहिं बहु दाना॥
तुम्ह तें अधिक गुरहि जियँ जानी। सकल भायँ सेवहिं सनमानी॥
सबु करि मागहिं एक फलु राम चरन रति होउ।
तिन्ह कें मन मंदिर बसहु सिय रघुनंदन दोउ॥
काम कोह मद मान न मोहा। लोभ न छोभ न राग न द्रोहा॥
जिन्ह कें कपट दंभ नहिं माया। तिन्ह कें हृदय बसहु रघुराया॥
सब के प्रिय सब के हितकारी। दुख सुख सरिस प्रसंसा गारी॥
कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी। जागत सोवत सरन तुम्हारी॥
तुम्हहि छाड़ि गति दूसरि नाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं॥
जननी सम जानहिं परनारी। धनु पराव बिष तें बिष भारी॥
जे हरषहिं पर संपति देखी। दुखित होहिं पर बिपति बिसेषी॥
जिन्हहि राम तुम्ह प्रानपिआरे। तिन्ह के मन सुभ सदन तुम्हारे॥
स्वामि सखा पितु मातु गुर जिन्ह के सब तुम्ह तात।
मन मंदिर तिन्ह कें बसहु सीय सहित दोउ भ्रात॥
अवगुन तजि सब के गुन गहहीं। बिप्र धेनु हित संकट सहहीं॥
नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका। घर तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका॥
गुन तुम्हार समुझइ निज दोसा। जेहि सब भाँति तुम्हार भरोसा॥
राम भगत प्रिय लागहिं जेही। तेहि उर बसहु सहित बैदेही॥
जाति पाँति धनु धरमु बड़ाई। प्रिय परिवार सदन सुखदाई॥
सब तजि तुम्हहि रहइ उर लाई। तेहि के हृदयँ रहहु रघुराई॥
सरगु नरकु अपबरगु समाना। जहँ तहँ देख धरें धनु बाना॥
करम बचन मन राउर चेरा। राम करहु तेहि कें उर डेरा॥
जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेहु।
बसहु निरंतर तासु मन सो राउर निज गेहु॥

(रा॰ च॰ मा॰ २। १२८। ४ से १३१ तक)

उपर्युक्त विवरणसे स्पष्ट है कि जिनमें भक्तिभाव है, जो समर्पणशील है, जो श्रीरामको सर्वेसर्वा समझते हैं, श्रीराम उनके हृदय-प्रदेशमें, मन-मन्दिरमें निवास करते हैं। श्रीरामका धाम भक्तोंका वास है, भक्तोंके भीतर है। भक्तोंके लिये श्रीराम भिन्न-भिन्न प्रकारके कष्ट सहनेको तैयार हैं।

साकेतका विशेष अर्थ वस्तुतः आनन्दमय एवं कुण्ठा-विरहित स्थान है, यही वैकुण्ठ है। श्रीरामका नित्यधाम केवल साकेत अथवा अयोध्याधाम नहीं, अपितु साकेतकी इयत्ता, इदृक्ताको प्रस्तुत करनेवाले सभी स्थल-विशेषमें है। साकेत भौगोलिक स्थानका भी द्योतक है, इसमें विरोध नहीं, पर भौगोलिक स्थल-विशेषसे परे भी इसका अस्तित्व है। भगवान् श्रीराम वास्तवमें सृष्टिके कण-कण, अणु-अणुमें रमण करते हैं, इस कारण इनकी 'राम' संज्ञा सार्थक है। श्रीराम निष्कपटता, छल-छद्महीनताको अधिक महत्त्व देते हैं, शरणागतोंकी रक्षा करते हैं। जो सब कुछ श्रीरामके श्रीचरणोंमें अर्पित कर देते हैं, श्रीराम उनकी खोज-खबर बराबर लेते रहते हैं। वे प्रपत्तिमार्गको अधिक महत्त्व देते हैं। श्रीरामका नित्यधाम सब जगह है। यह सबके लिये आकर्षणका केन्द्र है, उपयोगी भी है। भगवान् श्रीरामके जो सच्चे भक्त हैं, या जो सच्चे भक्त बन जाते हैं, इह लीलाकी समाप्तिके बाद वे साकेतवासी बनते हैं और यह साकेत वैकुण्ठके अतिरिक्त कोई दूसरा स्थान नहीं, जहाँ नित्य-निरन्तर यहाँसे वहाँतक शाश्वत आनन्द-ही-आनन्द छाया हुआ रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थितप्रज्ञ कर्मयोगी श्रीराम

(डॉ० श्रीदादूरामजी शर्मा)

श्रीराम अनासक्त कर्मयोगी थे, स्थितप्रज्ञ और समबुद्धि थे। उनका समग्र जीवन भोगसे त्यागकी श्रेष्ठताका ज्वलन्त उदाहरण है। मानवीय चिन्तनने जितने भी आदर्शोंकी परिकल्पना की है और चरित्रने जितने भी आदर्शोंकी प्रतिष्ठापना की है, वे सभी रामके व्यक्तित्वमें एक साथ प्रकट हुए। उनका अवतार आसुरी शक्तियों और दुष्प्रवृत्तियों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर) से लोककी रक्षा और लोकको कर्तव्यकी सम्यक् शिक्षा देनेके लिये हुआ था। महर्षि वाल्मीकिने श्रीरामको धर्मका मूर्तिमान् रूप कहा है—**'रामो विग्रहवान् धर्मः।'** धर्मका अर्थ है समाजके अस्तित्वकी रक्षा करनेवाला, मनुष्योंकी दुष्प्रवृत्तियोंका संस्कार करके उन्हें सत्पथपर प्रेरित करनेवाला, सबमें पारस्परिक सौहार्द (प्रेमभाव, भाई-चारा) उत्पन्न करनेवाला और मतभेदोंको मिटानेवाला। यही धर्म समाजकी स्थितिकी रक्षा करता है, उसे दृढ़ता और स्थायित्व प्रदान करता है—**'धारणाद् धर्म इत्याहुर्धर्मो धारयते प्रजाः'** वह व्यक्तिकी लौकिक उन्नति और आध्यात्मिक उत्थानका सोपान है—**'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः।'**अविरोध (निर्वैरता या मैत्रीभाव) ही उसका यथार्थ स्वरूप है—**'अविरोधात् तु यो धर्मः स धर्मः सत्यविक्रमः'**। रामका अवतार समाजमें इसी धर्मकी संस्थापनाके लिये हुआ था।

सामान्यतः मनुष्य विषम परिस्थितियोंमें अपना मानसिक संतुलन खो बैठता है। सुखमें वह फूला नहीं समाता तो दुःखमें दीन हो जाता है। अपनेसे प्रभावशाली व्यक्तिके सामने उसका हृदय हीन-भावनासे भर जाता है तो अपनेसे हीन व्यक्तिको पाकर उसका अहं जाग पड़ता है। यह मानव-मनकी सहज दुर्बलता है। भारतीय संस्कृतिके उन्नायक मनीषियोंने हमारे सामने एक ऐसा जीवन-दर्शन प्रस्तुत किया जो हमें प्रत्येक विषम स्थितिका अविचल भावसे सामना करनेका बल देता है। इस व्यावहारिक जीवन-दर्शनको स्थितप्रज्ञता या समत्वबुद्धि कहा जाता है। स्थितप्रज्ञता वह सर्वोत्तम मानसिक स्थिति है, जिसमें मनुष्य न तो दुःखमें उद्विग्न होता है, न सुखके लिये लालायित, न भयसे आक्रान्त होता है, न क्रोधमें अंधा, न प्रियकी प्राप्तिसे हर्षित होता है, न अप्रियकी प्राप्तिसे खिन्न—

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते॥

(गीता २।५६)

न प्रहृष्येत् प्रियं प्राप्य नोद्विजेत् प्राप्य चाप्रियम्।

(गीता ५।२०)

इस समत्व-बुद्धिका सबसे बड़ा बाधक तत्त्व है 'अहं'—'मैं-मेरा, तू-तेरा' की प्रवृत्ति। जिसके पास जितना अधिक भौतिक ऐश्वर्य होता है, उसमें अहंवाद भी उतना ही प्रबल होता है। इसलिये 'स्थितप्रज्ञता' की पहली सीढ़ी है—भौतिक ऐश्वर्य और सांसारिक माया-मोहमें लिप्त न होना। जब गुरु वसिष्ठने रामको उनके राज्याभिषेक होनेकी सूचना दी तो उन्हें तनिक भी प्रसन्नता नहीं हुई, उलटे उनकी समत्व-बुद्धिको एक झटका-सा लगा। वे सोचने लगे—अभीतक हम चारों भाई, माता-पिता और प्रजाकी दृष्टिमें समान थे, किंतु अब मैं राजा बन जाऊँगा तो मेरा स्थान विशिष्ट हो जायगा, मेरे अन्य भाई मुझसे हीन माने जाने लगेंगे। क्या यह इस विमल वंशके लिये अनुचित बात नहीं—

बिमल बंस यहु अनुचित एकू। बंधु बिहाइ बड़ेहि अभिषेकू॥

उनका सात्त्विक पछतावा उनकी स्थितप्रज्ञताका सहज परिणाम था। जिस समय राज्याभिषेक होना था, ठीक उसी समय उन्हें समस्त राजकीय चिह्नोंका परित्याग करके, राज्यसे निष्कासित होकर चौदह वर्षके लिये वनमें चले जानेकी दारुण आज्ञा मिलती है, फिर भी उनकी मुखकान्ति तनिक भी मलिन नहीं होती। यहींसे उनके 'रामत्व' (लोककल्याणकारी कर्म)-का श्रीगणेश होता है; क्योंकि अब वे अयोध्या-नरेशके पुत्रत्व और सीमित राज्यके घेरेसे निकलकर जन-जनके हो गये थे। राजाकी सीमाएँ होती हैं, किंतु वनवासी राम किसी सीमामें बँधे नहीं थे। फिर किसी भी राजाका भौतिक ऐश्वर्य परिमित होता है, जिसका वह अपने समसामयिक समाजमें निश्चित नियमोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भीतर ही पात्रोंमें वितरण कर सकता है या जनकल्याणकारी कार्योंमें उपयोग कर सकता है। प्रजाका रञ्जन (कल्याण) करनेके कारण वह 'राजा' कहलाता है, किंतु उसका प्रजारञ्जन उसकी जीवन-सीमामें बँधा रहता है, जबकि वनवासी रामका आध्यात्मिक ऐश्वर्य अपरिमित है, सार्वभौमिक, सार्वकालिक, सार्वदेशिक और सर्वसुलभ है। वनवासी रामकी सत्ता प्रेरक है, बाध्यकारी नहीं। वह समाजमें कर्मकी स्वतः स्फुरणा उत्पन्न करनेवाली है।

धनुष-यज्ञमें बड़े-बड़े भटमानी राजाओंके शौर्यदर्पका दलन करके भी विजयोल्लाससे बिलकुल अछूते रामकी स्थितप्रज्ञताकी पराकाष्ठा परशुराम-संवादमें दिखायी देती है, जिसके आगे परशुरामका नृपघाती कुठार कुण्ठित हो जाता है, उनका सारा अहंकार गल जाता है और त्याग एवं तपके भावी संरक्षक रामको अपने शस्त्र (अत्याचारियोंसे मानवताकी रक्षाका भार) सौंपकर वे तप करने चले जाते हैं।

अपनेको अभावग्रस्त और विपक्षीको साधन-सम्पन्न देखकर किसी भी वीरका मनोबल टूट सकता है। रावणको रथी और रामको विरथ देखकर विभीषणको शंका हुई कि विपन्न राम सम्पन्न रावणको कैसे पराजित कर सकेंगे? उसकी दृष्टिमें भौतिक उपलब्धि या बाह्य साधन-सम्पन्नता ही मानवकी स्थितिको सुदृढ़ बनाती है, उसे समरमें विजयश्रीसे मण्डित करती है। रामने उसकी शंकाका समाधान किया कि युद्धमें विजय उसीकी होती है, जिसमें अजेय आत्मबल हो, संकल्पकी दृढ़ता हो। उन्होंने उससे जिस अभेद्य 'धर्मरथ' की चर्चा की है, वह मानवके आन्तरिक गुणोंका ही पुंजीभूत स्वरूप है। सारा संसार दुश्मन होनेपर भी उस धर्मरथपर आरूढ़ व्यक्तिका बाल भी बाँका नहीं कर सकता। वही सभीको सरलतासे जीत सकता है। उस 'धर्मरथ' का स्वरूप है—

सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका॥
बल बिबेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे॥
ईस भजनु सारथी सुजाना। बिरति चर्म संतोष कृपाना॥
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा। बर बिग्यान कठिन कोदंडा॥
अमल अचल मन त्रोन समाना। सम जम नियम सिलीमुख नाना॥
कवच अभेद बिप्र गुर पूजा। एहि सम बिजय उपाय न दूजा॥
सखा धर्ममय अस रथ जाकें। जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें॥
महा अजय संसार रिपु जीति सकइ सो बीर।
जाकें अस रथ होइ दृढ़ सुनहु सखा मतिधीर॥

(रा० च० मा० ६। ८०। ५—११)

अब इस वैयक्तिक समत्वबुद्धिकी साधनाके बाद सामाजिक क्षेत्रमें समत्वबुद्धिकी बात आती है, जिसका परिचय रामने केवटको गले लगाकर, कोल-किरातोंसे आत्मीयता स्थापित करके, गीध जटायुके अपवित्र शरीरको गोदमें लेकर और मरणोपरान्त उसका पितृवत् अन्तिम संस्कार करके, शबरीके जूठे बेर खाकर तथा वानर-भालुओंसे मित्रता करके दिया।

लोकोत्पीडक दुष्प्रवृत्तियाँ पृथिवीपर सबसे बड़ा बोझ होती हैं। उनसे समाजको छुटकारा दिलानेके लिये, रावणत्वको प्रभावहीन बनानेके लिये, उसके तामस-तापसे विश्वको मुक्त करनेके लिये, संकीर्ण स्वार्थपरता और भौतिकवादसे मानव-मात्रको ऊपर उठाकर समाजमें शाश्वत मानवीय मूल्यों (धर्म) की पुनः स्थापना करनेके लिये रामका अवतार हुआ था। समय-समयपर संसारमें महापुरुषोंका जन्म भी इसीलिये होता है।

तब हौं नगर अजोध्या जैहौं।
एक बात सुन निस्चय मेरी, राज्य बिभीषन दैहौं॥
कपि-दल जोरि और सब सैना, सागर-सेतु बँधैहौं।
काटि दसौ सिर, बीस भुजा, तब दसरथ-सुत जु कहैहौं॥
छिन इक माहिं लंक गढ़ तोरौं, कंचन-कोट ढहैहौं।
'सूरदास' प्रभु कहत बिभीषन, रिपु हति सीता लैहौं॥

(सूर-रामचरितावली)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-धाम—अयोध्या

(स्वामी श्रीपरमहंसजी महाराज)

अन्य युगोंकी अपेक्षा इस घोर कलिकालमें भगवत्प्राप्तिके लिये भगवद्भक्ति ही सर्वोत्तम और सुगम साधन है। भक्तिका अनुष्ठान करनेवालोंके लिये महत्त्वपूर्ण साधन और भगवत्सम्बन्धी पदार्थोंमें चार मुख्य हैं—भगवान्‌के दिव्य नाम, रूप, लीला और परात्पर धाम—

रामस्य नाम रूपं च लीला धाम परात्परम्।
एतच्चतुष्टयं नित्यं सच्चिदानन्दविग्रहम्॥

(वसिष्ठसंहिता)

भगवान्‌के नाम-रूप-लीला-धाम—ये सभी नित्य और सच्चिदानन्द-स्वरूप हैं। इनके गुण, प्रभाव, तत्त्व तथा रहस्य—इन चारोंको विशेष रूपमें समझना चाहिये। बिना नाम-रूप-लीला-धामके सफलता नहीं मिलती। ये चारों अभिन्न तो हैं ही; संग्राह्य, संकीर्तनीय, अनुष्ठेय एवं ज्ञातव्य भी हैं। अतः भगवन्नामके ब्रह्म, ॐ, हरि, राम, कृष्ण, गणेश, शिव, दुर्गा—ये सभी पर्यायवाची हैं—सगुण ब्रह्मके विवर्त-स्वरूप हैं।

नाम एवं नामी—ये दोनों अद्वय हैं, एक हैं अर्थात् नाम और नामीमें कोई भेद नहीं है। नामकी सुगमता एवं सर्वग्राह्यताके कारण नाम-संकीर्तन साधना-सिद्धिकी प्रथम सीढ़ी है। नाम ही साधना भी है और साध्य भी। भगवन्नामसे परलोक—दिव्यधामकी प्राप्ति होती है।

भगवत् एवं भगवत्स्वरूप एक ही है। नामकीर्तनकी भाँति रूप-संकीर्तन या ध्यान-माहात्म्य-कीर्तन भी महत्त्वपूर्ण है। अतः रूप-संकीर्तन-प्रेमियोंको अपने अभीष्ट परमात्माके रूपका ध्यान एवं संकीर्तन करते रहना चाहिये। भगवान्‌का स्वरूप चित्तस्थित समस्त कलिजनित पापों तथा दोषोंको दूर कर देता है। ध्यानकी एकतानता हो जानेसे भगवद्दर्शन भी सुलभ हो जाता है।

नाम-रूपकी क्रिया-प्रक्रियाका नाम लीला है। जैसे नाम-रूप—इन दोनोंमें ऐक्य है वैसे ही लीला भी अभिन्न-स्वरूप है। शक्तिमान्‌की शक्ति वास्तवमें एक है, वही शक्ति लीलारूपमें परिणत होती है। वेद-शास्त्र-पुराण-इतिहास आदि भगवल्लीला-स्वरूप हैं। उनमें रामायण तथा भागवत भगवल्लीला-संकीर्तनके सर्वोत्तम ग्रन्थ हैं।

भगवल्लीला भगवान्‌की तरह नित्य एवं सत्य तत्त्व है। भगवान् अपने भक्तोंके सुख-सम्पदाके लिये अवतार-चरित्र-लीला-संस्थापनाके लिये विविध लीलाएँ की हैं। वे कान, नेत्र, वाणी और मन-द्वारा सेवनीय हैं। श्रद्धा-प्रेमपूर्वक भगवल्लीलाका सेवन करनेवाला मनुष्य परमात्माका साक्षात् दर्शन करके परम आनन्दको प्राप्त कर लेता है।

भगवान्‌की समस्त लीलाएँ स्वार्थरहित, अहंकाररहित होनेसे परम पवित्र एवं परम कल्याणकारिणी हैं। वैसे भगवान्‌की लीलाको तन्मयतासे गाया जाय, सुना जाय तथा मनन किया जाय तो जीव शिव हो जाता है। विराट् परमपुरुषके शरीरमें स्वधाम बतलाते हुए कहा गया है—

स भूमिꣳ सर्वतः स्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्।

सच्चिदानन्दमय विज्ञानानन्दघन मस्तकमें बताया है। मूर्धाके मध्यमें दिव्य चेतन कहा है। क्योंकि—**'यद् ब्रह्माण्डे तत्पिण्डे'** कहा गया है। मस्तकमें अयोध्याधामको बतलाते हुए कहा है कि काशी, कांची, मथुरा, माया, वृन्दावन, द्वारका, उज्जैन और गया—ये सब दिव्य धाम शरीरमें स्थित हैं—

विष्णोःपाद अवन्तिकां गुणवतीं मध्ये च कांचीपुरीं
नाभौ द्वारवतीं तथा च हृदये मायापुरीं पुण्यदाम्।
ग्रीवामूलमुदाहरन्ति मथुरां नासाग्रे वाराणसी-
मेतद्वेदविदो वदन्ति मुनयोऽयोध्यापुरीं मस्तकम्॥

विराट् पुरुष भगवान् विष्णुके चरणोंमें उज्जैन है, मध्य भागमें कांचीपुरी है। नाभिमें द्वारकाधाम है, हृदयमें हरिद्वार है, ग्रीवामूल मथुरा है। नासिकाग्रमें काशीपुरी और मस्तकमें अयोध्यापुरी है जो अवधधाम कहलाता है।

जो देवताओं, राक्षसों, शत्रुओंसे जीता नहीं जा सके उसे अयोध्या कहते हैं। अर्थात् सतोगुण विष्णु, रजोगुण ब्रह्मा और तमोगुण शंकरसे परे गुणातीत अवधधाम कहलाता है। ब्रह्माण्डस्थित अवध या अयोध्या भूतलपिण्डस्थित अयोध्या-धाम है। भगवान् स्वयं कहते हैं—

पुनि देखु अवधपुरी अति पावनि। त्रिबिध ताप भव रोग नसावनि॥

भगवान् श्रीरामजी कहते हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जद्यपि सब बैकुंठ बखाना। बेद पुरान बिदित जगु जाना॥
अवधपुरी सम प्रिय नहिं सोऊ। यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ॥
जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि। उत्तर दिसि बह सरजू पावनि॥
जा मज्जन ते बिनहिं प्रयासा। मम समीप नर पावहिं बासा॥
अति प्रिय मोहि इहाँ के बासी। मम धामदा पुरी सुख रासी॥

इसी प्रकार भगवन्नाम, भगवद्रूप और भगवल्लीला अभिन्न है। जैसे नाम-संकीर्तन किया जाता है, वैसे भगवद्रूपका संकीर्तन किया जाता है, वैसे ही भगवत्-लीलाका भी संकीर्तन होता है जो कल्याणप्रद है। नाम-रूप-लीलाका अवश्यमेव सेवन करना चाहिये।

भगवद्धामको भगवान्‌की भाँति चिन्मय, नित्य, दिव्य एवं रसामृत, सर्वोपरि, सबसे श्रेष्ठ, सत्य तत्त्व समझना चाहिये। ब्रह्मलोक, सत्यलोक, गोलोक, साकेतलोक, वैकुण्ठलोक, शिवलोक—ये सभी पर्यायवाची हैं। विभिन्न होते हुए भी अभिन्न हैं। जहाँ बुद्धि-मन-वाणी नहीं पहुँच सकती, उस भगवद्धामकी विलक्षणताका वर्णन करते हुए स्वयं भगवान् कहते हैं—

न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम॥

(गीता १५। ६)

संसारको प्रकाशित करनेवाले सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, नक्षत्र, विद्युत् और मन-वाणी तथा चक्षुके देवता इनके अतिरिक्त और भी जितने प्रकाश करनेवाले तत्त्व माने गये हैं—ये सब मिलकर भी भगवान्‌को अथवा भगवान्‌के धामको प्रकाशित करनेमें समर्थ नहीं हैं। ये स्वयं प्रकाशित एवं स्वयं ज्योतिःस्वरूप हैं। भगवन्नाम, भगवद्रूप, भगवल्लीला-से भगवद्धामकी अभिन्नता है, जहाँ मन-वाणी तथा नेत्र नहीं पहुँच सकते—

यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।

(ब्रह्मोपनिषद्)

भगवान्‌का धाम भगवत्स्वरूप ही है, मायातीत है, अव्यक्त है, अक्षर है, परमगति है, अचिन्त्य है, अनिर्वचनीय है, अप्रमेय है तथा अपरिसीम एवं अविनाशी है। जहाँ जानेपर पुनः लौटना नहीं होता, जहाँ पहुँचनेपर इस संसारसे कभी किसी भी कालमें किसी भी अवस्थामें पुनः सम्बन्ध नहीं हो सकता, वह भगवद्धाम कहलाता है। वह सदानन्द, परमानन्द, शान्ताकार, सनातन कल्याणस्वरूप, कैवल्य निर्वाणपद है। ब्रह्मादि देवताओं तथा योगियोंद्वारा वन्दित है।

अयोध्या हमारा साकेत लोक है। अयोध्या रामधाम है। अयोध्यापुरी मोक्षदायिका है। उसका सेवन एवं दर्शन करना, उसमें निवास करना तथा अवगाहन करना हमारा कर्तव्य है। आध्यात्मिक दृष्टिसे षट्-चक्रोंसे ऊपर मस्तकमें सहस्रार-कमल-दल-चक्रमें अयोध्यापुरी स्थित है। उसका योगबलसे दर्शन पाया जाता है।

भगवान्‌के नाम-रूप-लीला-धाम—इन साधनचतुष्टयके सेवनसे मनुष्य भगवत्प्राप्ति सहजमें कर सकता है। अतएव आशा है कि रामभक्ति-सम्पन्न भक्तोंको इससे लाभ प्राप्त होगा और सभी जन भगवन्नाम-रूप-लीला-धामका सेवन करके अपने मनुष्य-जीवनको सफल करेंगे।

चाहत है धन जौ तू, सेउ सियारमन कौं,
जातैं बिभीषन पायौ राज अबिचल है।
चाहै जौ अरोग, तौ सुमिरि एक ताही, जिन
मर्‌यौ फेरि ज्यायौ साखामृगन कौ दल है॥
चाहै जौ मुकति जोहै पति रघुपति, जिन
कोसल नगर कीनौ मुकत सकल है।
'सेनापति' ऐसे राजा राम कौं बिसारि जो पै,
और कौं भजन कीजै, सो धौं कौन फल है॥

(कवित्तरत्नाकर ५। ९)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'रामायन सत कोटि अपारा'

पाञ्चरात्र आगमोंमें भगवान् श्रीसीताराम

रामोपासनामें मधुर उपासनाको लेकर अनेक संहिताओंका निर्माण हुआ है। इन संहिताओंका कालनिर्णय इस प्रकार विवादग्रस्त है कि क्या अन्तःसाक्ष्य और क्या बहिःसाक्ष्य, किसी प्रकार भी किसी निश्चयपर पहुँचना बड़ा कठिन हो जाता है। साहित्य, साधना एवं सिद्धान्त-संस्थापनकी दृष्टिसे इन संहिताओंका विशेष महत्त्व स्वीकार करना पड़ता है और इनके भीतरसे साधनाका जो स्रोत अखण्ड रूपसे प्रवाहित होता आ रहा है, वह अनेकानेक मधुर रसके उपासकोंके लिये परम आश्रय एवं आनन्दका कारण रहा है। मान्य संहिता-ग्रन्थोंकी सूची इतनी विशाल एवं व्यापक है कि उनका विस्तारसे विवेचन सम्भव नहीं है, फिर भी यहाँ कुछेक संहिताओंका संक्षेपमें वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है—

(१) श्रीहनुमत्संहिता

इसमें 'हनुमान्-अगस्त्य'का संवाद है और भगवान् रामकी रासलीला तथा जल-विहारका बड़े ही विस्तारसे एवं परम मनोहर शैलीमें वर्णन हुआ है। सीताकी सभी सखियाँ उनकी कायव्यूह हैं, क्योंकि सीताके शरीरसे ही १८१०८ सखियोंकी सृष्टि होती है, जिनके साथ भगवान् राम उतने ही शरीर धारण कर रास करते हैं। इसमें कुल ६० श्लोक हैं।

(२) श्रीशिवसंहिता

यह बीस अध्यायोंका ग्रन्थ है। इसके आरम्भमें वर्णित 'शिव-पार्वती-संवाद'में तथा पुनः 'अगस्त्य-हनुमान्-संवाद' में साधुसमागमकी महिमा, श्रीरामके अनेक गुणों और विभूतियोंका वर्णन, ध्यान, वन-दर्शन और पुनः वन-केलिका वर्णन आया है। रास-विलासके प्रसंगमें ठीक वैसा ही भव्य मनोहारी वर्णन है, **जैसा श्रीमद्भागवत्के रासपञ्चाध्यायीमें मिलता है**— नदी-नद—सब स्तब्ध हो, जहाँ-के-तहाँ रुक गये। पशु-पक्षी, कीट-पतंग सब ब्रह्मानन्दमें मग्न हो, आत्मविभोर हो गये। आकाशमें देवताओंके विमान इस दृश्यको देखनेके लिये छा गये—यहाँतक कि इस दृश्यको देखकर शिवका हृदय भी विमोहित हो गया और वे अपना ताण्डव-नृत्य भूल गये।

(३) श्रीलोमशसंहिता

श्रीलोमशसंहिताकी पूरी प्रति उपलब्ध नहीं है। केवल एक खण्डित प्रति मिली है, जिसमें १५ वें अध्यायसे लेकर २२ वें अध्यायतक कुल आठ अध्याय प्राप्त हैं। इनमें परमश्रेष्ठ मुनि पिप्पलाद तथा लोमशजीका संवाद है। कोटिकंदर्पलावण्य रसमूर्ति भगवान् श्रीरामका सीताजीके साथ और सीताजीकी अनेक सखियोंके साथ नानाविध रास-विलासका भी इसमें वर्णन है।

(४) श्रीबृहद्ब्रह्मसंहिता

दस अध्यायोंमें निबद्ध यह संहिता वैष्णवोंकी मधुर साधनाका प्रधान उपजीव्य ग्रन्थ है। इसमें राधा-कृष्ण और सीता-राम, दोनोंकी युगल उपासनाका विधान है। इसके प्रारम्भके पाँच अध्यायोंमें वैष्णव-साधनाका सामान्य विधान प्रस्तुत किया गया है। सातवें अध्यायमें श्रीरामावतारका हेतु तथा पुनः षडक्षर श्रीराममन्त्रकी महिमाका वर्णन है। '**श्रीरामः शरणं मम**' पर समाप्त होनेवाले इस अध्यायमें अनेक श्लोक हैं। यहाँ भगवान् श्रीरामका एक बड़ा ही भव्य ध्यान है।

(५) श्रीअगस्त्यसंहिता

यह श्रीवैष्णवोंकी परम प्रामाणिक संहिताओंमें परमादरणीय है। इसमें अगस्त्य और सुतीक्ष्णका संवाद है। आरम्भमें वर्णाश्रमधर्मकी प्रतिष्ठा है, फिर भिन्न-भिन्न फलोंकी प्राप्तिके लिये विभिन्न राममन्त्रोंके न्यास, विनियोग, कीलक, बीज आदिके साथ उल्लेख है। इसके अनन्तर इक्कीसवें अध्यायतक 'ब्रह्मविद्या'का निरूपण है। इसके बादके अध्यायमें हृदयकमलमें सीता-रामकी आश्लिष्ट युगलमूर्तिका मङ्गलमय ध्यान है। इसके अनन्तर षडक्षर मन्त्रकी महिमा एवं यन्त्र-कवचादिका विस्तारसे वर्णन है और युगलमूर्तिके षोडशोपचार-पूजनका विधान है।

(६) श्रीवाल्मीकिसंहिता

श्रीरामानन्दीय वैष्णवोंमें इस संहिताको परम श्रद्धाकी दृष्टिसे देखा जाता है। इसमें कुल पाँच अध्याय हैं। आरम्भमें देवगुरु बृहस्पति सभी मुनियोंके समक्ष श्रवण-कीर्तनादि नवधा-भक्तिका व्याख्यान करते हैं। फिर राममन्त्रकी महिमा कहते हैं और उसकी गुरु-परम्परा बताते हैं, जो अन्यत्र दी हुई परम्पराके अनुरूप ही है। इसके अनन्तर विरक्त वैष्णवोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षण एवं कुलकृत्यका वर्णन है तथा दीक्षासंस्कार, कण्ठी-धारण आदि वैष्णवाचारोंका वर्णन है। इस संहितामें लक्ष्य करने योग्य एक बात है; और वह यह कि ऊर्ध्वपुण्ड्रके भेद-प्रभेदमें भगवान् रामका श्रीहनुमान्‌के प्रति वचन है कि मेरे अनुरागी भक्त ऊर्ध्वपुण्ड्रके बीचमें 'श्री' (लाल रेखा) नहीं धारण करते और सीताजीके भक्त बीचमें 'बिन्दु-श्री' लगाते हैं। इसके अन्तमें भी **'श्रीरामः शरणं मम'** मन्त्रकी महिमाका वर्णन है।

अब यहाँ उन संहिताओंका संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है, जिनका उल्लेख रामावत-सम्प्रदायके मधुरोपासक संतोंने साम्प्रदायिक आकर-ग्रन्थोंके भाष्यमें मतस्थापनके लिये उद्धृत किया है।

(७) श्रीशुकसंहिता

आरम्भमें गोलोकविहारी भगवान् कृष्ण एवं राधारानीके रास-विलासका वर्णन है, फिर लीला-रहस्यका वर्णन है, जिसमें राधा और कृष्ण दोनों ही परम देवाधिदेव भगवान् रामके शरीरमें प्रवेश कर जाते हैं। ये राम पुरुषोत्तममात्र नहीं हैं, वे सनातन परब्रह्म हैं।

(८) श्रीवसिष्ठसंहिता

इस संहिताका नामोल्लेख एवं विषय-विवरण 'उपासनात्रयसिद्धान्त' में आया है। इसमें दिव्य अयोध्याका वर्णन है। इसके ३६ वें अध्यायमें लिखा है कि सर्वोपरि वैकुण्ठ है, वैकुण्ठसे भी परे गोलोक है, गोलोकके मध्यमें साकेतलोक है, साकेतलोकके पूर्व मिथिला है, दक्षिणमें चित्रकूट है, पश्चिममें वृन्दावन है, उत्तरमें महावैकुण्ठ है, जहाँ सब पार्षदोंके सहित श्रीमन्नारायण रहते हैं। ये ही नारायण सृष्टिकर्ता २४ अवतारोंके कारण हैं और ये ही श्रीरामचरितके मुख्याचार्य हैं। साकेतलोक सप्तावरणोंके भीतर है।

(९) सदाशिवसंहिता

स्वामी रामचरणदास 'करुणासिन्धुजी' ने 'श्रीराम-नवरत्नसार-संग्रह' ग्रन्थ तैयार किया था। इसमें कई स्थानोंपर नाममहिमाके सम्बन्धमें 'सदाशिवसंहिता' का उल्लेख है। इसके अनन्तर दिव्य अयोध्या एवं उसके सप्त आवरणोंका विशेष विस्तारसे वर्णन तथा साकेतविहारी भगवान् राम और भगवती सीताका बड़ा ही भव्य ध्यान है।

(१०) श्रीमहाशम्भुसंहिता

'श्रीरामनवरत्न' के पृष्ठ ११ पर महाशम्भुसंहिताके दो श्लोक उद्धृत हैं, जो जानकीजीने श्रीरामचन्द्रके प्रति कहे हैं। यहाँ 'राम'-नामकी महिमाका विषय है। श्रीजानकीजी कहती हैं कि 'कोई प्रणवको श्रेष्ठ कहते हैं, कोई अन्य किसी मन्त्रको, परंतु प्रणव या अन्य बीजमन्त्र भी रकार-मकारसे ही सिद्ध होते हैं। राममन्त्रका प्रभाव पूरा-का-पूरा समझ लेना कठिन है। वेद अनादिकालसे 'राम' के नामकी थाह नहीं ले पा रहे हैं, औरोंकी तो क्या कथा ?'

(११) हिरण्यगर्भसंहिता

'श्रीरामनवरत्न' के उक्त संस्करणके पृष्ठ ४१में 'हिरण्य-गर्भसंहिता' का उल्लेख है और अगस्त्यजीने सुतीक्ष्णजीसे कहा है कि 'अद्वैत आनन्दरूप शुद्ध-चैतन्य-सत्त्वैकलक्षण श्रीरामचन्द्रजी सबके भीतर-बाहर इस ब्रह्माण्डमें प्रकाशित हो रहे हैं।'

(१२) महासदाशिवसंहिता

श्रीरामनवरत्नके उक्त संस्करणके पृष्ठ ५७-५९ तक 'महासदाशिवसंहिता' का उल्लेख है, जिसमें यह कहा गया है **कि नाना प्रकारके मन्त्रों, नामों एवं चिह्नोंमें भरमना और भटकना व्यर्थ है। सबसे श्रेष्ठ श्रीराम-नाम है, जिसके परमाचार्य श्रीहनुमान्‌जी हैं, शेष सभी नाम श्रीरामनामके अंशमात्र हैं, परम धाम श्रीरामधाम है, रामभक्ति ही राजमार्ग है।**

(१३) ब्रह्मसंहिता

श्रीरामनवरत्नमें पृष्ठ २६ पर 'ब्रह्मसंहिता' का एक ही श्लोक उद्धृत है—

पूर्णः पूर्णावतारश्च श्यामो रामो रघूद्वहः।
अंशा नृसिंहकृष्णाद्या राघवो भगवान् स्वयम्॥

'भगवान् रामजी पूर्णावतार एवं पूर्ण ब्रह्म हैं, कृष्ण-नृसिंहादि अवतार अंश हैं, श्रीराघव स्वयं भगवान् हैं।'

इसी प्रकार पुराणसंहिता, आलवन्दारसंहिता, बृहत्सदा-शिवसंहिता तथा सनत्कुमारसंहिता (१४, १५, १६, १७) श्रीराधाकृष्णकी लीलाओंसे सम्बद्ध होते हुए भी श्रीसीतारामकी मधुर उपासनाको हृदयंगम करनेके लिये परम उपयोगी हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाल्मीकिरामायणकी कथा

[विशेषाङ्क पृ०-सं० २१६ से आगे]

दण्डकारण्यकी ओर

भरतजीके अयोध्या लौट जानेके बाद श्रीरामने चित्रकूटमें रहना उचित न समझा। वे सीता और लक्ष्मणके साथ दण्डकारण्यकी ओर बढ़ने लगे। पहले वे महामुनि अत्रिके आश्रमपर पहुँचे।

महामुनिने पुत्रकी भाँति रामको प्यार किया। यहाँ सती अनसूयाने सीताजीको बहुत ही प्यारसे अपनाया। बार-बार गलेसे लगाया। दिव्य वस्त्रों और आभूषणोंसे सीताजीको सजाकर वे आँखें भरकर उन्हें देरतक निहारती रहीं। इसी सजी अवस्थामें सीताको रामके पास जानेकी आज्ञा दीं। सीताका यह सत्कार देखकर राम-लक्ष्मण बहुत प्रसन्न हुए।

ऋषियोंद्वारा श्रीरामका आतिथ्य

धीरे-धीरे दण्डकारण्य आ पहुँचा। वहाँ मुनियोंके बहुत-से आश्रम थे। सभी सजे-सजाये और सुहावने थे। रामने धनुषकी प्रत्यञ्चा उतारकर आश्रममें प्रवेश किया। इन्हें अतिथिके रूपमें अपनाकर मुनि बहुत प्रसन्न हुए। श्रीरामके शरीरका गठन, रूप और लावण्य देखकर वे चकित हो गये। बस, तीनोंको एकटक निहारते ही रहे। वे निहाल हो गये। जल, फल, फूलके साथ-साथ अपना सारा आश्रम ही अपने प्रिय अतिथिको समर्पित कर दिया। प्रातःकाल श्रीराम जब आश्रमसे जाने लगे, तब मुनियोंने उनसे राक्षसोंसे अपने बचावकी माँग की। श्रीरामने इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया। तब उन्होंने भयंकर विराध राक्षसका वधकर उसका उद्धार भी कर दिया।

शरभंगके आश्रममें श्रीराम

इसके बाद वे लोग महामुनि शरभंगके आश्रमके पास पहुँचे, उस समय वे हवन कर रहे थे। तीनों मुनिको प्रणामकर बैठ गये। शरभंग मुनिने प्रेमपूर्वक आतिथ्य कर कहा कि 'अभी-अभी इन्द्र हमें ब्रह्मलोक ले जानेके लिये आये थे। मैंने उन्हें यह कहकर लौटा दिया कि राम यहाँ आनेवाले हैं। उनके दर्शनके बिना मैं नहीं जाऊँगा। अच्छा हुआ आप आ गये। प्रभो ! मैंने ब्रह्मलोक, स्वर्गलोक आदि जितने लोक अर्जित किये हैं, उन्हें आपको अर्पित करता हूँ। आप ग्रहण करें।'

श्रीरामने कहा—'मैं ही आपको सब लोकोंकी प्राप्ति कराऊँगा। इस समय मेरे निवासके योग्य स्थान बताइये।' महामुनिने श्रीरामको महात्मा सुतीक्ष्णमुनिका पता बताया और प्रार्थना की कि जबतक मैं इस जीर्ण-शीर्ण शरीरका त्याग न कर दूँ, तबतक आप मेरे सामने ही विराजमान रहें और मेरी ओर देखते रहें। इसके बाद शरभंग मुनि अग्निमें प्रवेश कर गये और अग्निके समान तेजस्वी होकर कुमारके रूपमें प्रकट हुए और फिर ब्रह्मलोक चले गये। ब्रह्माने वहाँ इनका आतिथ्य किया।

मुनियोंको अभयदान

श्रीरामजीका आगमन सुनकर वहाँ सभी मुनि आ पहुँचे। उन्होंने राक्षसोंके द्वारा मारे गये मुनियोंकी हड्डियोंके ढाँचोंका ढेर दिखाया और प्रार्थना की कि हम आपकी शरणमें आये हैं। आप हमारी रक्षा करें। श्रीरामने उन्हें अभय प्रदान किया।

सुतीक्ष्णके आश्रममें

इसके बाद श्रीराम सीता और लक्ष्मणके साथ सुतीक्ष्ण-मुनिके आश्रममें पहुँचे। सुतीक्ष्णमुनि वहाँ बहुत ही अधीरतासे अपने आराध्य श्रीरामकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने भी बताया कि इन्द्र उन्हें ब्रह्मलोक ले जानेके लिये आये थे, किंतु आपके दर्शनके लिये मैंने उन्हें लौटा दिया। वे कहते थे कि वहाँ भी आप राम-लक्ष्मण और सीताके साथ विचरण किया करेंगे। इसपर श्रीरामने कहा—'मैं स्वयं आपको उन लोकोंकी प्राप्ति कराऊँगा। इस समय आप बतायें कि हम कहाँ निवास करें।' सुतीक्ष्णमुनिने अगस्त्य ऋषिके आश्रममें जानेको कहा। इसके बाद सुतीक्ष्णमुनिने दुर्लभ अतिथिका हृदयसे आतिथ्य किया। तीनोंने वहीं रात बितायी।

महर्षि अगस्त्यके आश्रममें

प्रातःकाल श्रीराम आगे-आगे चलने लगे। बीचमें सीता और उनके पीछे सावधान होकर लक्ष्मण चल रहे थे। महामुनि अगस्त्यके भाईके आश्रममें एक रात बिताकर दूसरे दिन वे महर्षि अगस्त्यके आश्रममें आ पहुँचे। महामुनि अगस्त्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीरामकी प्रतीक्षा बड़ी आतुरताके साथ कर रहे थे। उन्होंने श्रीरामको आया देख, उन्हें हृदयसे लगा लिया और पाद्य-अर्घ्यसे उनका आतिथ्य किया। इसके बाद सावधान होकर दिव्य अस्त्र-शस्त्रोंको प्रदान किया। जैसे—भगवान् विष्णुका दिया हुआ धनुष, ब्रह्माका दिया हुआ बाण, इन्द्रके दिये सदा भरे रहनेवाले दो तरकश आदि। इसके बाद महामुनिने उन्हें पञ्चवटीमें रहनेको कहा। श्रीराम आगे चल पड़े।

पञ्चवटीमें निवास

रास्तेमें जटायुसे भेंट हो गयी। जटायुने बड़े वात्सल्यके साथ तीनोंको अपनाया। जटायुने बताया कि दशरथजी मेरे मित्र थे। श्रीरामने पिताकी तरह जटायुका सम्मान किया। वे पर्णशाला बनाकर पञ्चवटीमें रहने लगे। वहीं सीता और लक्ष्मणके साथ गोदावरी गङ्गामें स्नान करके पवित्र जलसे देवताओं और पितरोंका तर्पण करते थे।

शूर्पणखाका अत्याचार

एक दिन रावणकी बहन शूर्पणखा वहाँ आ पहुँची। श्रीरामका सौन्दर्य देखकर वह भार्या-रूपमें अपनेको ग्रहण करनेके लिये श्रीरामसे अनुरोध करने लगी। उनके द्वारा टाल दिये जानेपर वह लक्ष्मणके पास गयी; किंतु वहाँ भी मना करनेपर वह अपने असली रूपमें आ गयी। सीताको खाने दौड़ी। श्रीरामने हुंकारसे उसे रोक दिया। लक्ष्मणजीने उसके नाक-कान काट लिये।

श्रीरामद्वारा खर-दूषण एवं त्रिशिराका संहार

शूर्पणखा भागी-भागी अपने भाई खरके पास पहुँची और रोती हुई अपनी दुर्दशाकी बात बतलायी। खर क्रोधसे बावला हो गया। वह चौदह हजार सेना सजाकर श्रीरामपर चढ़ आया। श्रीरामने लक्ष्मणसे कहा—सुरक्षाके लिये तुम सीताको लेकर गुफामें चले जाओ। लक्ष्मणजीने तुरंत आज्ञाका पालन किया। वे कवच पहनकर धनुष-बाण ले युद्धके लिये खड़े हो गये। युद्ध देखनेके लिये गन्धर्व, सिद्ध, चारण आदि आकाशमें एकत्र हो गये। श्रीरामने क्षणभरमें ही खर-दूषण, त्रिशिरा एवं उनकी विशाल सेनाओंका संहार कर डाला। प्रसन्न होकर देवताओंने श्रीरामपर पुष्पवृष्टि की।

रावणका मारीचके पास आना और लौट जाना

अकम्पन नामका राक्षस किसी तरह जान बचाकर रावणके पास जा पहुँचा। उसने जनस्थानकी विनाश-लीला सुना दी। यह भी बताया कि श्रीराम अजेय हैं। इसलिये उसने रावणको सीता-हरणका उपाय सुझाया। अकम्पनकी राय रावणको पसंद आ गयी। वह मारीचके पास जा पहुँचा और सीताहरणमें उससे सहायता माँगी। मारीचने श्रीरामको अजेय सिद्धकर इस कुकर्मसे रोका। रावण लंका लौट गया।

शूर्पणखाका रावणको प्रलोभन देना

पीछे रोती हुई शूर्पणखा वहाँ पहुँची। उसने अपनी दुर्दशा बतलायी और बताया कि श्रीरामको मारनेका एक उपाय यह है कि उसकी प्राण-प्रिया भार्याका हरण कर लिया जाय। उसके वियोगमें वह स्वयं मर जायगा और सीता तुम्हारी हो जायगी।

मारीचका माया-मृग बनना और मारा जाना

रावण फिर मारीचके पास पहुँचा। तरह-तरहसे समझाकर मारीचने फिर लौटाना चाहा। इस बार रावण क्रोधसे लाल हो गया। उसने डाँटकर कहा—'यदि तुम मेरी आज्ञा नहीं मानोगे तो मैं तुम्हें अभी मार डालूँगा।' मारीच विवश होकर मृगका रूप धारण कर सीताके आस-पास विचरण करने लगा। मृगका रूप बहुत ही विस्मयमें डालनेवाला था। उसे देखकर सीताने रामसे कहा—'किसी तरह आप इसे मेरे लिये ला दें। यदि जीवित पकड़में आ जाय तो ज्यादा उत्तम है।' श्रीराम सीताका मन दुखाना नहीं चाहते थे। उन्होंने लक्ष्मणसे कहा—'तात ! तुम सावधानीसे सीताकी रक्षा करना।'

अनन्तर श्रीरामने दूरतक मृगका पीछा किया। पीछे उसे मारना ही उचित समझा। सधा हुआ एक बाण मारा। मारीच ताड़के बराबर उछलकर जमीनपर आ गया। मरते समय श्रीरामकी आवाजमें वह चिल्लाया—'हा सीते ! हा लक्ष्मण !'

सीताका चिन्तित होना

उस आवाजको सुनकर सीताका मन आशंकाओंसे भर गया। उन्होंने लक्ष्मणको आज्ञा दी कि तुम भाईकी सहायताके लिये तुरंत जाओ, किंतु लक्ष्मण श्रीरामका आदेश विचारकर हिले नहीं। सीताजी अधीर हो गयीं। उन्होंने लक्ष्मणसे रामकी सहायता करनेके लिये जानेको कहा। इसपर लक्ष्मणजीने कहा—'श्रीरामको कोई जीत नहीं सकता, वह आर्तनाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीरामका नहीं है। फिर यदि मैं जाऊँ भी तो आपकी रक्षा कैसे होगी।' यह सुनकर सीताजीकी आशंका कम नहीं हुई। विवश हो लक्ष्मण 'देवता आपकी रक्षा करें'—इतना कहकर श्रीरामजीके पास चल पड़े।

रावणद्वारा सीताहरण

रावण इसी परिस्थितिकी प्रतीक्षा कर रहा था। झट साधुवेषमें आया। अतिथि समझकर सीताजीने उसका सत्कार किया। अवसर पाकर रावण अपने स्वरूपमें आ गया और बोला—'मैं रावण हूँ। तुम्हें पटरानी बनाना चाहता हूँ। पाँच हजार दासियाँ तुम्हारी सेवा करेंगी।'

यह सुनकर सीताजी क्रोधसे काँप उठीं। उन्होंने रावणको कड़ी फटकार दी। रावणने सीताजीको उठाकर रथपर बैठा लिया। रथ बहुत तेजीसे आकाशमें उड़ने लगा। सीताजीको कोई सहायक नहीं दीख रहा था। वे जोर-जोरसे रोने लगीं।

जटायुका आत्मदान

इतनेमें सीताजीकी दृष्टि जटायुपर पड़ी। उन्होंने कहा—'आर्य जटायु! यह राक्षस मुझे हरण कर ले जा रहा है। श्रीराम-लक्ष्मणसे यह बात बता दीजियेगा।' जटायुने रावणको इस कुकृत्यसे बचनेके लिये कहा। जटायुका उपदेश रावणको जहरकी तरह पीड़ा पहुँचा रहा था। वह जटायुपर झपटा। जटायुने अपने पंजेसे उसकी शरीरमें बहुत-से घाव कर दिये। रावण सीताको लिये हुए पृथिवीपर आ गिरा। सँभलकर रावण जटायुसे युद्ध करने लगा। घोर युद्ध होने लगा। अन्तमें रावणने शीघ्रतासे तलवारके द्वारा जटायुके दोनों पंख काट डाले। बूढ़े जटायु पृथिवीपर आ गये। अब रावण तेजीसे उड़ने लगा। सीताकी दृष्टि पर्वतके शिखरपर बैठे पाँच श्रेष्ठ वानरोंपर पड़ी। उन्होंने अपने गहनोंको वस्त्रमें लपेटकर उनके बीचमें गिरा दिया। रावण इतनी घबड़ाहटमें था कि उसे कुछ पता नहीं चला। वह तीव्रगतिसे उड़कर लंका पहुँच गया।

रावणको फटकार

रावणने सीताको समझाया—इस लंकामें श्रीराम कभी पहुँच नहीं सकते। उस वनवासीकी आशा छोड़ दो। तुम मुझे स्वीकार कर लो।

सीता निर्भय होकर तृणकी ओट देकर रावणसे बोलीं—'जैसे जलके बिना मछली नहीं जी सकती, वैसे मैं भी श्रीरामके बिना जीवित नहीं रह सकती। अभी जो जी रही हूँ वह केवल इसलिये कि मैं सम्भवतः श्रीरामको देख सकूँगी। श्रीराम सर्वसमर्थ हैं। वे लंकामें पहुँचकर तुम्हारा सर्वनाश कर देंगे।'

सीताजी अशोक-वाटिकामें

सीताजीकी कठोर बात सुनकर रावण तिलमिला गया। उसने कहा—'सोचनेके लिये तुम्हें बारह महीनेका और समय देता हूँ, सोच लो।' उसके बाद रावणने त्रास देनेवाली भयानक राक्षसियोंके पहरेमें सीताजीको अशोक-वाटिकामें रखवा दिया।

देवराजने सीताको दिव्य खीर खिलाया

पतिके दर्शनकी तीव्र उत्कण्ठामें डूबी रहनेके कारण सीताजीका खाना-पीना छूट गया। इससे ब्रह्माको चिन्ता हुई। उन्होंने देवराज इन्द्रको बुलाकर समझाया कि तुम शीघ्र लंका जाकर सीताको दिव्य खीर खिला दो। यदि सीताका शरीर नहीं रहेगा तो देवताओंका कार्य संदेहमें पड़ जायगा। इन्द्र निद्रा देवीको साथ लेकर शीघ्र ही सीताके पास पहुँच गये। निद्रा देवीने राक्षसियोंको मोहित कर दिया। सब अचेत हो गयीं। तब इन्द्रने सीताजीसे कहा—'देवि! मैं आपको छुड़ानेके लिये श्रीरामकी सहायता करूँगा। आप निश्चिन्त रहें। यह दिव्य खीर ग्रहण कीजिये। इससे हजारों वर्षतक भूख-प्यास नहीं लगेगी।'

श्रीराम और लक्ष्मणका नाम कानमें पड़ते ही सीताजी चेतन हो गयीं। बहुत दिनोंके बाद उन्होंने ये अत्यन्त प्रिय नाम सुने थे। इन्होंने इन्द्रके आदेशका पालन किया।

चिन्तित होकर श्रीरामका लौटना

मरते समय मारीचने श्रीरामके समान स्वरोंमें जो आर्तनाद किया था, उससे श्रीरामको निश्चय हो गया कि सीतापर कोई भारी विपत्ति आनेवाली है। संतोष यह था कि वहाँ लक्ष्मण विद्यमान हैं। वे लंबे डग बढ़ाते हुए आश्रमको लौट रहे थे। इसी बीच लक्ष्मण मिल गये। वे ताड़ गये कि अब सीताका मिलना सम्भव नहीं। उन्होंने लक्ष्मणसे कहा—'सीताको छोड़कर तुम्हें नहीं आना चाहिये था। उसे राक्षस खा गये होंगे। यदि ऐसा हुआ तो मैं दो मुहूर्त भी जीवित नहीं रह पाऊँगा।'

—यह सुनकर लक्ष्मण बहुत घबरा गये। यदि सीताके बिना श्रीराम दो मुहूर्त भी जी नहीं सकते तो लक्ष्मण श्रीरामके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिना एक मुहूर्त भी तो नहीं जी सकते थे।

श्रीरामका उन्मन होना

आश्रमको सूना पाकर दोनों भाई घबरा गये। सीताजीका कहीं पता नहीं था। श्रीराम विरहसे व्यथित हो उठे। विलाप करते हुए वे पशु-पक्षियों, वृक्षोंसे सीताका पता पूछने लगे। मृग भी झुंड बाँधकर श्रीरामसे सहानुभूति करने आ गये। श्रीरामने उनसे पूछा—सीता कहाँ है? सब-के-सब मृग आकाशकी ओर देखते हुए दक्षिण दिशाकी ओर दौड़े। वे कुछ बोल भी रहे थे। लक्ष्मणने उनका अभिप्राय समझकर भाईसे कहा—'भैया ! ये मृग बता रहे हैं कि सीतामाताको आकाश-मार्गसे दक्षिणकी ओर कोई ले गया है। हमें दक्षिणकी ओर ढूँढ़ना चाहिये।'

जटायुसे भेंट

गोदावरीके समीप इधर-उधर भागती हुई सीताजीके पद-चिह्न दीख गये और उनका पीछा करते हुए किसी-किसीके बड़े-बड़े पदचिह्न भी दीख गये। आगे बढ़नेपर खूनसे लथपथ गृध्रराज जटायु मिले। उन्होंने सारी घटना सुना दी। ढाढस दिया कि सीता तुम्हें अवश्य मिल जायगी। क्योंकि 'विन्द' मुहूर्तमें उनका अपहरण हुआ है। इस मुहूर्तमें खोया हुआ पदार्थ स्वामीको अवश्य मिल जाता है। यह कहकर जटायुने अपने प्राणका त्याग कर दिया।

जटायुका संस्कार

श्रीरामजी घने शोकसे घिर गये। उन्होंने कहा—'लक्ष्मण ! मुझे सीताके हरणसे इतना शोक नहीं हो रहा है, जितना जटायुके मरनेसे।' इसके बाद श्रीरामने पिताकी तरह ससम्मान जटायुका और्ध्वदैहिक कर्म सम्पन्न किया। फिर गोदावरी नदीमें जलाञ्जलि दी।

कबन्धका उद्धार

आगे बढ़नेपर उन्हें मार्गमें शापग्रस्त भयंकर कबन्ध नामका एक राक्षस मिला। वह राम-लक्ष्मणपर झपट पड़ा, श्रीरामने उसका वध कर डाला। कबन्धको राक्षस-योनिसे छुटकारा मिल गया। कबन्धकी प्रार्थनापर जब श्रीराम और लक्ष्मणजीने उसका दाह-संस्कार किया, तब वह दिव्य स्वरूप प्राप्त कर विमानपर बैठ गया। रामजीकी कृपासे अब उसे दिव्य ज्ञान प्राप्त हो चुका था। उसने श्रीरामको सुग्रीवसे मित्रता करनेके लिये कहा तथा उधर जानेवाले मार्गका भी निर्देश किया।

शबरीका आतिथ्य

दोनों भाई पम्पा-सरोवरकी ओर बढ़ने लगे। रास्तेमें सिद्ध तपस्विनी शबरीसे मिले। शबरीने भाव-विभोर होकर उनका आतिथ्य किया। उसके बाद हाथ जोड़कर बोली—प्रभो ! आज आपके दर्शनसे मेरी तपस्या सफल हुई। जब आप चित्रकूट पर्वतपर पधारे थे, उसी समय मेरे गुरुजन आपके दिव्य धाममें जा पहुँचे। जाते समय उन्होंने बताया था कि 'श्रीराम और लक्ष्मण तुम्हारे अतिथि होंगे। उनके दर्शनसे तुम्हें दिव्य धाम मिलेगा।' तबसे मैं आपके लिये बहुत-से फलों और फूलोंका संचय करती आ रही हूँ। आप इन्हें स्वीकार करें। श्रीरामने शबरीके गुरुदेव महामुनि मतंगकी तपस्याका चमत्कार देखना चाहा। तब शबरीने उन्हें सप्तसागर तीर्थ दिखाया, जो उसके गुरुदेवके चिन्तनमात्रसे उत्पन्न हो गया था। शबरीने अपने गुरुके उन वस्त्रोंको भी दिखाया जो अभीतक सूखे नहीं थे, ज्यों-के-त्यों गीले-के-गीले पड़े थे। उनकी मालाएँ भी अभी मुरझायी नहीं थीं। इसके बाद शबरीने भगवान्से प्रार्थना की—'प्रभो ! जिनका यह आश्रम है, जिनके चरणोंकी मैं दासी रही हूँ, उन्हीं पवित्रात्मा महर्षियोंके समीप जाना चाहती हूँ। आप मुझपर कृपा करें।' इसपर प्रसन्न हो भगवान् बोले—'भद्रे ! तुमने मेरा बहुत सत्कार किया है। तुम्हारी भक्ति अनुपम है, अब तुम अपनी इच्छाके अनुसार आनन्दपूर्वक अभीष्टलोककी यात्रा करो।' शबरीपर भगवान्का अनुग्रह हो गया था, भगवान्से आज्ञा लेकर वह दिव्यधामको चली गयी। श्रीराम-लक्ष्मणने पम्पासरोवरकी ओर प्रस्थान किया। (क्रमशः)

(ला० बि० मि०)

रामेति नाम यच्छ्रोत्रे विश्रम्भादागतं यदि। करोति पापसंदाहं तूलं वह्निकणो यथा॥

'जिसके कानोंमें 'राम' यह नाम अकस्मात् भी पड़ जाता है, उसके पापोंको वह वैसे ही भलीभाँति जला देता है, जैसे अग्निकी चिनगारी रूईको।' (पद्मपुराण, पाताल० २०।८०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीरामभक्त–गाथा

जिसका है राम रक्षक, उसका है कौन भक्षक ?

[सच्ची घटना]

श्रीराम-नामकी बड़ी विलक्षण महिमा है। श्रीभक्तराज प्रह्लादजी महाराजका प्राण, जीवन-सर्वस्व एकमात्र 'श्रीराम'-नाम ही था। श्रीराम-नामके बलपर ही श्रीप्रह्लादजी महाराजने अपने घोर नास्तिक पिता राक्षसराज हिरण्यकशिपुसे डटकर टक्कर ली थी और सत्य सनातनधर्मकी रक्षा की थी तथा श्रीराम-नामकी पताका शानसे फहराकर दिखायी थी। श्रीराम-नामका ही यह एक अद्भुत चमत्कार था कि पहाड़ोंपरसे गिराये जानेपर और हाथीसे रौंदवाये जानेपर भी उनका बाल बाँका नहीं हुआ। दहकती धाँय-धाँय करती आगमें झोंके जानेपर भी श्रीराम-नामके प्रतापसे उनका रोयाँतक नहीं जला। भयंकर नागोंसे डसवानेपर भी श्रीराम-नामकी कृपासे उनको विष नहीं चढ़ा। अन्तमें सनातनधर्मके उस अद्भुत दुधमुँहे विलक्षण बालकने श्रीराम-नामके बलपर ही खंभेमेंसे निराकार ब्रह्मको साकार बना श्रीनृसिंहभगवान्‌के रूपमें प्रकट कर जगत्‌के सामने खड़ाकर, नास्तिकोंका मुख-मर्दनकर आस्तिकताका झंडा फहराकर दिखा दिया। उस समय सारा देश-का-देश ही नहीं, अपितु समस्त विश्व नास्तिक हिरण्यकशिपुके चक्करमें फँस गया था, पर इन भक्तराज श्रीप्रह्लादजी महाराजके कारण और श्रीराम-नामके अद्भुत चमत्कारके कारण घोर नास्तिक बननेसे बच गया और इस प्रकार देश, जाति, हिन्दू-सभ्यता, संस्कृति, धर्म-कर्म, वेद-शास्त्र, गो-ब्राह्मण—सभीकी श्रीराम-नामके प्रतापसे रक्षा हो गयी।

श्रीराम-नामके इस अद्भुत चमत्कारको भारतका बच्चा-बच्चा जानता है और मानता है; पर इतनेपर भी कुछ आधुनिक सभ्यताके रंगमें रँगे नास्तिक बाबू लोग श्रीराम-नाममें विश्वास नहीं करते और श्रीराम-नाममें विश्वास करनेवालोंको मूर्ख समझकर उनकी हँसी उड़ाया करते हैं। ऐसे ही घोर नास्तिकोंकी आँखें खोलनेके लिये कभी-कभी भगवान् अद्भुत आश्चर्यजनक लीला दिखाया करते हैं, जिसे देखकर बड़े-बड़े नास्तिकोंको भी सहसा ईश्वरमें और उसके नाममें विश्वास करना पड़ता है और श्रीराम-नामके अद्भुत चमत्कारको मानना पड़ता है तथा सनातनधर्मका लोहा माननेके लिये बाध्य होना पड़ता है।

हम पाठकोंके सामने श्रीराम-नामके अद्भुत चमत्कार-सम्बन्धी सन् १९५१ की एक बिलकुल सत्य घटना रखते हैं, जिससे पाठकोंको श्रीराम-नामकी अद्भुत शक्तिका पता लगेगा और यह भान होगा कि श्रीराम-नाम ही हमारी सब प्रकारसे रक्षा कर सकता है।

विमान-दुर्घटनाके समय श्रीराम-नामने अपना क्या अद्भुत चमत्कार दिखाया ?

समस्त भारत ही नहीं अपितु समस्त विश्व जानता है कि नवम्बर सन् १९५१ में एक बड़ी महान् भयंकर विमान-दुर्घटना हुई थी, जिसमें लगभग १४-१५ आदमी चालकसहित मर गये थे और वह विमान भी चूर-चूर हो गया था। उसी विमान-दुर्घटनामें सुप्रसिद्ध आर्यसमाजी एवं काँग्रेसी लीडर देशबन्धु गुप्ता भी मारे गये थे तथा आपके साथी अन्य काँग्रेसी भी मारे गये थे। जहाँ इस विमान-दुर्घटनामें सभी यात्री मारे गये और चालक भी नहीं बच पाया था तथा विमान भी चूर-चूर हो गया था, वहाँ एकमात्र श्री सी० एस० मेहताजी बच गये, वह बड़ी ही आश्चर्यजनक घटना थी। एकमात्र वही क्यों बचे और कैसे ? तथा उन्हें ऐसी घोर विपत्तिमें किसने बचाया, यह एक प्रश्न सामने है।

विमान-दुर्घटनामें बचे एकमात्र यात्री श्री सी० एस० मेहताजीने दुर्घटनाका संस्मरण स्वयं अपने मुखसे बताते हुए कहा कि उक्त रात्रिकी दुर्घटना मुझे याद है। हम सब १३ यात्री कंबलोंमें लिपटे हुए सो रहे थे या ऊँघ रहे थे। इसी समय दमदम हवाई अड्डेकी रोशनी दीख पड़ी। यात्रियोंको सचेत कर सीटोंसे बाँध दिया गया और विमान उतरनेका प्रयत्न करने लगा। विमानने हवाई अड्डेका चार बार चक्कर लगाया और सुरक्षितरूपमें उतरनेका प्रयत्न करने लगा। श्रीमेहताने बताया कि इसके बाद क्या हुआ यह स्पष्ट नहीं है, पर ऐसा अनुभव हुआ कि विमान किसी वृक्षकी चोटीसे छू गया और जमीनपर आ रहा है। उसके कुछ सेकेंड बाद ही विमान ऊपर उठा और अन्तमें गिरकर चूर-चूर हो गया। मुझे याद है कि मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस समय राम-राम जप रहा था। दुर्घटनाके बाद मैं एक किनारे पड़ा था, इतनेमें गाँववाले आ गये और उन्होंने मेरी प्राथमिक सहायता की।'

उपर्युक्त विवरणसे स्पष्ट प्रकट होता है कि श्रीमेहताजी उस समय राम-नाम जप रहे थे। इसी श्रीराम-नाम जपनेका यह अद्भुत आश्चर्यजनक चमत्कार था कि जहाँ सभी-के-सभी यात्री मारे गये थे और विमानचालक भी नहीं बचा था तथा विमान भी चूर-चूर हो गया था वहाँ एकमात्र श्रीमेहताजीके प्राण बच गये!

श्रीमेहताजीका कोई अपने पूर्वजन्मका महान् पुण्योदय हुआ था कि जो घोर विपत्तिके समयमें भी उनके मुखसे 'राम-राम'का जप होने लगा, जिससे कि उनकी श्रीराम-नामके प्रतापसे रक्षा हो गयी। जिस भगवान्ने आँवेंमें बिल्लीके बच्चोंकी रक्षा की और जिस भगवान्ने महाभारतके युद्धके समय टटीरीके अंडोंकी रक्षा की और जिस राम-नामने मीराके जहरको अमृत बना डाला था तथा जिस राम-नामने श्रीतुलसीदासजीद्वारा मुर्दा जिंदा करा दिया था, उसी श्रीराम-नामके जापने श्रीमेहताजीको बचाया था। प्रत्येक स्त्री-पुरुष, बालक-बूढ़े, गरीब-अमीर, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि सभीका एकमात्र यह परम कर्तव्य है कि वे नित्यप्रति सोते-जागते, उठते-बैठते, चलते-फिरते, नहाते-धोते सभी अवस्थाओंमें हर समय प्रत्येक क्षण श्रीराम-नामामृतका पान करें और श्रीराम-नाम जपकर अपना मनुष्य-जीवन सार्थक करें। श्रीराम-नाम ही हमारे अन्तिम समयका एकमात्र सहारा है और यही हमारे अन्त-समयमें काम देगा। यह विज्ञानका अभिमान और अंग्रेजीकी बी० ए०, एम्० ए० की डिग्री और फैशनपरस्ती कुछ भी काम न देगी, बस बोलो प्रेमसे मिलकर बोलो—

श्रीराम जय राम जय जय राम।
श्रीराम जय राम जय जय राम॥

—गोलोकवासी भक्त श्रीरामशरणदासजी

सखा सुग्रीव

न सर्वे भ्रातरस्तात भवन्ति भरतोपमाः।
मद्विधा वा पितुः पुत्राः सुहृदो वा भवद्विधाः॥

(श्रीरामजी सुग्रीवसे कहते हैं—)'भैया! सब भाई भरतके समान आदर्श नहीं हो सकते। सब पुत्र हमारी तरह पितृभक्त नहीं हो सकते और सब सुहृद् तुम्हारी तरह दुःखके साथी नहीं हो सकते।'

सब सम्बन्धोंके एकमात्र स्थान श्रीहरि ही हैं। उनसे जो भी सम्बन्ध जोड़ा जाय, उसे वे पूरा निभाते हैं। सच्ची लगन होनी चाहिये, एकनिष्ठ प्रेम होना चाहिये। प्रेमपाशमें बँधकर प्रभु स्वामी बनते हैं। वे सखा, सुहृद्, भाई, पुत्र, सेवक सभी कुछ बननेको तैयार हैं। उन्हें शिष्टाचारकी आवश्यकता नहीं, वे तो सच्चा स्नेह चाहते हैं।

प्रभु तरु तर कपि डार पर ते किए आपु समान।
तुलसी कहूँ न राम से साहिब सीलनिधान॥

सुग्रीवको भगवान्ने स्थान-स्थानपर अपना सखाभक्त माना है। बालि और सुग्रीव—ये दो भाई थे। दोनोंमें ही परस्पर बड़ा स्नेह था। बालि बड़ा था, इसलिये वही वानरोंका राजा था। एक बार एक राक्षस रात्रिमें किष्किन्धा आया। आकर बड़े जोरसे गरजने लगा। बालि उसे मारनेके लिये नगरसे अकेला ही निकला। सुग्रीव भी भाईके स्नेहके कारण उसके पीछे-पीछे चला। वह राक्षस एक बड़े भारी बिलमें घुस गया। बालि अपने छोटे भाईको द्वारपर बैठाकर उस राक्षसको मारने उसके पीछे-पीछे उस गुफामें चला गया। सुग्रीवको बैठे-बैठे एक पक्ष बीत गया, किंतु बालि उस गुफामेंसे नहीं निकला। एक महीने बाद गुफामेंसे रक्तकी धार निकली। सुग्रीवने समझा, मेरा भाई मर गया है, अतः उस गुफाको एक बड़ी भारी शिलासे ढककर वह किष्किन्धापुरीमें लौट गया। मन्त्रियोंने जब राजधानीको राजासे हीन देखा तो उन्होंने सुग्रीवको राजा बना दिया। थोड़े ही दिनोंमें बालि आ गया। सुग्रीवको राजगद्दीपर बैठा देखकर वह बिना ही जाँच-पड़ताल किये क्रोधसे आगबबूला हो गया और उसे मारनेको दौड़ा। सुग्रीव भी अपनी प्राणरक्षाके लिये भागा। भागते-भागते वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मतंग ऋषिके आश्रमपर पहुँचा। बालि वहाँ शापवश जा नहीं सकता था, अतः वह लौट आया और सुग्रीवका धन-स्त्री आदि सभी उसने छीन लिया। राज्य, स्त्री और धनके हरण होनेपर दुखी सुग्रीव अपने हनुमान् आदि चार मन्त्रियोंके साथ ऋष्यमूक पर्वतपर रहने लगा।

सीताजीके हरण हो जानेपर भगवान् श्रीरामचन्द्रजी अपने भाई लक्ष्मणजीके साथ उन्हें खोजते-खोजते शबरीके बतानेपर ऋष्यमूक पर्वतपर आये। सुग्रीवने दूरसे ही श्रीराम-लक्ष्मणको देखकर हनुमान्जीको भेजा। हनुमान्जी उन्हें आदरपूर्वक ले आये। अग्निको साक्षी करके दोनोंमें मित्रता हुई। सुग्रीवने अपना सब दुःख भगवान्को सुनाया। भगवान्ने कहा—'मैं बालिको एक ही बाणसे मार दूँगा।' सुग्रीवने परीक्षाके लिये अस्थिसमूह दिखाया। श्रीरामजीने उसे पैरके अँगूठेसे ही गिरा दिया। फिर सात ताड़ोंको एक बाणसे गिरा दिया। सुग्रीवको विश्वास हो गया कि श्रीरामजी बालिको मार देंगे। सुग्रीवको लेकर श्रीरामजी बालिके यहाँ गये। बालि लड़ने आया। दोनों भाइयोंमें बड़ा युद्ध हुआ। अन्तमें श्रीरामचन्द्रजीने एक ऐसा बाण तककर बालिको मारा कि वह मर गया।

बालिके मरनेपर श्रीरामजीकी आज्ञासे सुग्रीव राजा बनाये गये और बालिके पुत्र अंगदको युवराजका पद दिया गया। तदनन्तर सुग्रीवने वानरोंको इधर-उधर श्रीसीताजीकी खोजके लिये भेजा और श्रीहनुमान्जीद्वारा सीताजीका समाचार पाकर सुग्रीव अपनी असंख्य वानरी सेना लेकर लंकापर चढ़ गये। वहाँ उन्होंने बड़ा पुरुषार्थ दिखलाया। सुग्रीवने संग्राममें रावणतकको इतना छकाया कि वह भी इनके नामसे डरने लगा।

लंका-विजय करके ये भी श्रीरामजीके साथ श्रीअवधपुरी आये और वहाँ श्रीरामजीने उनका परिचय कराते हुए गुरु वसिष्ठजीसे कहा—

ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे। भए समर सागर कहँ बेरे॥
मम हित लागि जन्म इन्ह हारे। भरतहु ते मोहि अधिक पिआरे॥

श्रीरामजीने सुग्रीवको स्थान-स्थानपर 'प्रिय सखा' कहा है और अपने मुखसे स्पष्ट कहा है कि तुम्हारे समान आदर्श निःस्वार्थ सखा संसारमें बिरले ही होते हैं। श्रीरामजीने थोड़े दिन इन्हें अवधपुरीमें रखकर बिदा कर दिया और ये भगवान्की लीलाओंका स्मरण-कीर्तन करते हुए अपनी पुरीमें रहने लगे। अन्तमें जब भगवान् निजलोक पधारे, तब ये भी आ गये और भगवान्के साथ ही साकेत गये। सुग्रीव-जैसे भगवत्कृपाप्राप्त सखा संसारमें बिरले ही होते हैं। उनका समस्त जीवन रामकाज और रामस्मरणमें ही बीता। यही जगमें जीवनका परम लाभ है। भगवान्से प्रार्थना करते हुए सुग्रीवजी कहते हैं—

त्वत्पादपद्मार्पितचित्तवृत्तिस्त्वन्नामसंगीतकथासु वाणी।
त्वद्भक्तसेवानिरतौ करौ मे त्वदङ्गसंगं लभतां मदङ्गम्॥
त्वन्मूर्तिभक्तान् स्वगुरुं च चक्षुः पश्यत्वजस्रं स शृणोतु कर्णः।
त्वज्जन्मकर्माणि च पादयुग्मं व्रजत्वजस्रं तव मन्दिराणि॥
अङ्गानि ते पादरजोविमिश्रतीर्थानि बिभ्रत्वहिशत्रुकेतो।
शिरस्त्वदीयं भवपद्मजाद्यैर्जुष्टं पदं राम नमत्वजस्रम्॥

'प्रभो! मेरी चित्तवृत्ति सदा आपके चरणकमलोंमें लगी रहे, मेरी वाणी सदा आपके नामका गान करती रहे, हाथ आपके भक्तोंकी सेवामें लगे रहें और मेरा शरीर (आपके पाद-स्पर्श आदिके मिससे) सदा आपका अङ्ग-संग करता रहे। मेरे नेत्र सर्वदा आपकी मूर्ति, आपके भक्त और अपने गुरुका दर्शन करते रहें, कान निरन्तर आपके दिव्य जन्म-कर्मोंकी कथा सुनते रहें और मेरे पैर सदा आपके मन्दिरोंकी यात्रा करते रहें। हे गरुडध्वज! मेरा शरीर आपकी चरण-रजसे युक्त तीर्थोदकको धारण करे और मेरा सिर निरन्तर आपके उन चरणोंमें प्रणाम किया करे, जिनकी शिव और ब्रह्मादि देवगण भी सदैव सेवा करते हैं।'

रामु हैं मातु, पिता, गुरु, बंधु, औ संगी, सखा, सुतु, स्वामि, सनेही।
रामकी सौंह, भरोसो है रामको, रामरँग्यो, रुचि राच्यो न केही॥
जीअत रामु, मुएँ पुनि रामु, सदा रघुनाथहि की गति जेही।
सोई जिऐ जगमें, 'तुलसी' नतु डोलत और मुए धर देही॥

(कवितावली ७।३६)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनु और शतरूपाकी राम-भक्ति

(श्रीरामनरेशजी दीक्षित, शास्त्री)

तीरथ बर नैमिष बिख्याता। अति पुनीत साधक सिधि दाता॥

अत्यन्त पवित्र और साधकोंको सिद्धि देनेवाला तीर्थोंमें श्रेष्ठ नैमिषारण्य प्रसिद्ध तीर्थ है। श्रीमद्भागवतमें लिखा है कि साधना सर्वत्र असफल या सफल नहीं होती, साधना-स्थलका भी अपना महत्त्व है। भागवतमें सात्त्विक भूमिके जो लक्षण गिनाये गये हैं, वे सब नैमिषारण्यमें विद्यमान हैं। इस भूमिपर पैर रखते ही एक विलक्षण शान्ति तथा सात्त्विकताका अनुभव होता है। सबसे प्रमुख बात यह है कि नैमिषारण्य तीर्थ ही राजर्षि मनु और महारानी शतरूपाकी तपःस्थली बनी और उनकी तपस्या तथा अनन्यनिष्ठासे प्रसन्न होकर साक्षात् नारायणने यहीं प्रकट होकर उन्हें दर्शन दिये और अंशोंसहित पुत्ररूपमें अवतरित होनेका वर प्रदान किया। यह श्रेय नैमिषारण्य तीर्थको ही प्राप्त हुआ।

राजर्षि मनु और महारानी शतरूपासे ही यह सारी सृष्टि हुई है। स्वायम्भुव मनु धर्मात्मा, न्यायप्रिय, सदाचारी और नीतिमान् राजा थे। महारानी शतरूपा भी उन्हींके समान सभी सद्गुणोंसे सम्पन्न थीं। वे दोनों भगवान्‌के अनन्य भक्त थे। बहुत समयतक धर्म एवं न्यायपूर्वक प्रजाका पालन करते हुए जब राजर्षि मनु वृद्धावस्थाको प्राप्त हुए तब उनके मनमें विचार आया कि घरमें रहते-रहते वृद्धावस्था आ गयी, विषयोंसे न विराग हुआ और न ठीकसे हरि-भजन ही हो सका, हरि-भक्तिके बिना तो जीवन व्यर्थ ही जा रहा है। यह सोचकर उनके मनमें बड़ा दुःख हुआ और उन्होंने सम्पूर्ण प्रजाको सुख-शान्तिसे सम्पन्न करके पुत्रके न चाहनेपर भी आग्रहपूर्वक उसे राज्य-भार सौंपकर वानप्रस्थ-आश्रम ग्रहण कर लिया तथा नैमिषारण्यमें ही आकर महान् कठोर तप किया, उन्हें दर्शन देनेके लिये ब्रह्मा, विष्णु और महेश आये। अनेक बार वर माँगनेका प्रलोभन दिया, परंतु उन्होंने कोई अन्य वर नहीं माँगा। ब्रह्म-सुखके अभिलाषी, तपोमूर्ति, राजर्षिका मन चलायमान नहीं हुआ। वे द्वादशाक्षर मन्त्र **'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय'**का निरन्तर एकाग्र-मनसे जप करते रहे। दीर्घकालतक वे जल पीकर रहे, बादमें उन्होंने जल भी छोड़ दिया और एक पैरपर खड़े होकर सपत्नीक तपस्या करते रहे। अन्ततः प्रभु द्रवित हुए। आकाशवाणीने महाराज मनुको वरदान माँगनेके लिये कहा। मनुने साकार-रूपमें दर्शनकी इच्छा व्यक्त की। भगवान् मनुकी प्रार्थना स्वीकारकर अपनी स्वरूपाशक्तिके साथ उनके सम्मुख प्रकट हो गये। भगवान्‌के दिव्य स्वरूपको[१] देखकर मनु-शतरूपा एकटक उन्हें देखते ही

१-नील सरोरुह नील मनि नील नीरधर स्याम।
लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम॥
सरद मयंक बदन छबि सींवा। चारु कपोल चिबुक दर ग्रीवा॥
अधर अरुन रद सुंदर नासा। बिधु कर निकर बिनिंदक हासा॥
नव अंबुज अंबक छबि नीकी। चितवनि ललित भावँती जी की॥
भृकुटि मनोज चाप छबि हारी। तिलक ललाट पटल दुतिकारी॥
कुंडल मकर मुकुट सिर भ्राजा। कुटिल केस जनु मधुप समाजा॥
उर श्रीबत्स रुचिर बनमाला। पदिक हार भूषन मनिजाला॥
केहरि कंधर चारु जनेऊ। बाहु बिभूषन सुंदर तेऊ॥
करि कर सरिस सुभग भुजदंडा। कटि निषंग कर सर कोदंडा॥
तड़ित बिनिंदक पीत पट उदर रेख बर तीनि।
नाभि मनोहर लेति जनु जमुन भवँर छबि छीनि॥
पद राजीव बरनि नहिं जाहीं। मुनि मन मधुप बसहिं जेन्ह माहीं॥
बाम भाग सोभति अनुकूला। आदिसक्ति छबिनिधि जगमूला॥
जासु अंस उपजहिं गुनखानी। अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी॥
भृकुटि बिलास जासु जग होई। राम बाम दिसि सीता सोई॥
(रा० च० मा० १। १४६; १४७। १—८; १४७; १४८। १—४)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रह गये, देहकी सुधि भूल गयी, नेत्रोंसे आनन्दाश्रुकी धारा प्रवाहित हो चली। दण्डवत् गिर पड़े भगवान्के चरणोंपर। भगवान्ने उनका स्पर्शकर उठाया और वरदान माँगनेको कहा। मनुजीको संकोच हो रहा था। भगवान्ने बार-बार निःसंकोच वर माँगनेको कहा, तब मनुने माँगा कि आपके समान पुत्र प्राप्त हो। भगवान् हँस पड़े। भला उनके समान रूप, शील, गुणमें दूसरा कोई कहाँसे आ सकता है ! इसलिये उन्होंने स्वयं उनका पुत्र होना स्वीकार किया।

शतरूपाजीने भगवान्के आग्रह करनेपर कहा—मेरे पतिदेवने जो वर माँगा है वही मुझे चाहिये। महाराज मनुने पुनः भगवान्से हाथ जोड़कर कहा कि मेरा जीवन आपके बिना सम्भव न रहे। जैसे मणिके बिना सर्प, जलके बिना मछली जीवित नहीं रह सकती, वैसे ही मेरा जीवन आपपर अवलम्बित रहे।

त्रेतायुगमें यही महाराज मनु अयोध्या-नरेश दशरथ हुए और उनकी पत्नी शतरूपा कौसल्या हुईं। इनके यहाँ भगवान् श्रीरामने अवतार ग्रहण किया। अपने अंशोंके साथ वे महाराज दशरथके पुत्र बने और उनकी नित्यशक्ति भगवती सीता मिथिलाराजकुमारीके रूपमें प्रकट होकर चक्रवर्ती महाराज दशरथकी पुत्रवधू बनीं।

राम परब्रह्मके रूपमें देखे जाते हैं। गोस्वामी श्रीतुलसीदासजीने मर्यादापुरुषोत्तम रामके आदर्श चरित्रद्वारा मनुष्यके उत्कृष्ट आचरणका उदाहरण प्रस्तुत किया है। अनेक भक्तोंने उनकी भक्ति करके अपना जीवन सार्थक बनाया। श्रीरामजीका बाल्यकाल, गुरुगृहगमन, विश्वामित्रकी यज्ञरक्षा, सीतास्वयंवर, परशुरामजीको क्षमा, वनगमन, राक्षस-संहार, सुग्रीव और विभीषणकी मैत्री, रावण-वध तथा अयोध्याके राजाके रूपमें एक श्रेष्ठ आचरण और मर्यादित जीवनकी शिक्षा देते हैं। उनकी परम भक्तिका सहारा लेकर शबरी, सुतीक्ष्ण तथा जटायु-जैसे भक्तोंने परमधाम प्राप्त किया।

इस प्रकार अनेकों भक्तोंका कल्याण करनेवाले तथा जीवमात्रका उद्धार कर देनेवाले भगवान् रामकी भक्त-वत्सलता धन्य है, जिसके कारण उन्होंने अपने भक्तके पुत्र-रूपमें जन्म लेना स्वीकार किया और धन्य है महाराज मनु और शतरूपाकी रामभक्ति जो भगवान्के अवतारका कारण बनी। ऐसे भक्त और उनके आराध्य भगवान्को बार-बार प्रणाम है।

संत श्रीनामदेवजीकी रामभक्ति

(श्रीशंकरलाल नामदेवजी, शिक्षक, एम्० ए०, साहित्यरत्न)

महाराष्ट्रमें पंढरपुर एक महत्त्वपूर्ण तीर्थस्थल है। इसे 'महायोगपीठ' भी कहते हैं। भगवान् आद्यशंकराचार्यने कहा है—

महायोगपीठे तटे भीमरथ्या वरं पुण्डरीकाय दातुं मुनीन्द्रैः।
समागत्य तिष्ठन्तमानन्दकन्दं परब्रह्मलिंगं भजे पाण्डुरंगम्॥

दूसरे सब पीठ हैं, परंतु पंढरपुर महायोग पीठ है। अन्य स्थानोंकी परम्परा छिन्न-भिन्न होती है, पर यहाँकी परम्परा अक्षुण्ण रहती है। इसी पंढरपुरमें श्रीदामा सेठके घर भक्त-शिरोमणि श्रीनामदेवजीने शक-संवत् ११८२, कार्तिक शुक्ला ११, २६ अक्टूबर, १२७० ई०, रविवारके दिन प्रातःकाल सूर्योदयके समय माता गोणाईकी कोखसे जन्म लिया। संत-शिरोमणि नामदेवजी उच्चकोटिके संत थे। वे सच्चे कर्मयोगीके रूपमें संसारमें रहकर भी कमलदलपुष्पकी तरह संसार-सागरसे अलिप्त थे। उन्हें अपने जीवनमें न किसीसे राग था, न किसीसे द्वेष। अपनी वाणी तथा लेखनीके द्वारा जनता-जनार्दनको जिस अमृत-ज्ञानका उपदेश उन्होंने दिया, वह अन्यत्र दुर्लभ है। वे सच्चे संत थे। उनकी रामभक्ति सर्वश्रेष्ठ थी। प्रभु रामके बिना तो वे अपना जीवन भी नहीं मानते थे।

सकल जनम मोकउ गुरूदीना। दुखबिसारी सुख अंतरि लीना॥
गिआन अंजनु गुरूदीना। राम नाम बिनु जीवन मनहीना॥
नामदेई सिमरनु करि जाना। जग जीवन सिउ सीउ समाना॥

'राम'-नामकी महिमा इतनी बड़ी, इतनी श्रेष्ठ है कि जिसके सामने संसारकी प्रत्येक नाशवान् वस्तु तुच्छ है। नामदेव 'राम'-नामकी महिमा गद्गद होकर मुक्तकण्ठसे गाते हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छाँड़ि-छाँड़ि रे मुगुध नर मन कपट न कीजै।
गोविंद नारायण नाम मुहयाँ लीजै॥
कोटि जे तीरथ करै, तन जो हिमालय गलै।
पृथ्वी जे सकल प्रदक्षिण कीजै। करवत कासीमें लीजै।
सिव कु जो शीश दीजै। राम राम राम सरि तऊ न तुलै॥
बनारसी तप करै पलटि तीरथ फिरै।
काया जे अगिनी मुखी कलेश कीजै। हिरन गर्भदान दीजै॥
अश्वमेध यज्ञ कीजै। रामनाम सरि तऊ न तुलै॥
मान जौ सरोवर जइयै। गया जो कुछ क्षेत्र न्हाइयै।
गोमती स्नान कीजै, गऊ कोटि दान दीजै।
कुंभ जो केदार जाइये, सिद्धहस्त गोदावरी न्हाइये।
राम राम राम सरि तऊ न तुलै॥
अश्वदान, गजदान, भूमिदान दीजै।
कन्यादान, गृहदान सेज्यादान दीजै॥
तन तुलां तौल दीजै मन को निर्मल कीजै।
राम राम राम सरि तऊ न तुलै॥
जम ही न दीजै दोष, मन ही न कीजै रोष।
निरख निर्वाण पद राम राम लीजै।
आत्मा अंग लगाई सेइले सहज भाई॥
भणंतं नाम द्यो, छीपौ घोल-घोल अमृत पीजै।
राम राम राम सरि तऊ न तुलै॥

संतशिरोमणि नामदेवजी महाराजके जीवनकालमें एक ऐसी चमत्कारिक घटना भी घटी जिसने यह सिद्ध कर दिया कि 'राम' नामके साथ संसारकी कोई वस्तु तौली नहीं जा सकती। यह घटना इस प्रकार है—

पंढरपुरमें एक साहूकार अपने शरीरके वजनके बराबर द्रव्य तौलकर ब्राह्मणों तथा दूसरे याचकोंको देता था। एक बार उसके मनमें विचार आया कि नामदेव भगवद्भक्त होकर गरीब और कुटुम्बवत्सल है तो उसे भी कुछ द्रव्य दे देना चाहिये। साहूकारने मनमें यह विचार कर श्रीनामदेवजीको बुलवाया और अपना हेतु प्रकट किया। श्रीनामदेवजीने कहा कि 'मैं भिक्षुक नहीं हूँ इसलिये तुलादानका हिस्सा लेनेकी मेरी इच्छा नहीं है तथा मैं समझता हूँ कि श्रीविट्ठल (राम) की कृपासे मेरे पास ऐसा कुछ अलौकिक धन है कि उसके सामने आपकी यह सम्पत्ति कुछ भी नहीं है।' यह सुनकर साहूकारने कहा—'ऐसा कैसे हो सकता है?' तब नामदेवजीने कहा कि 'तुम्हारी और हमारी सम्पत्तिकी तुलना करनेसे इस बातका निर्णय हो जायगा।' ऐसा निश्चय होनेपर साहूकारने अपनी कुछ सम्पत्ति तराजूके एक पलड़ेपर रख दी और नामदेवजीने एक तुलसीपत्रपर 'राम'-नामका पहला अक्षर 'रा' लिखकर दूसरे पलड़ेपर रख दिया। उस समय तुलसीपत्रका पलड़ा नीचे बैठ गया और सम्पत्तिका पलड़ा ऊपर उठ गया। फिर साहूकारने और जो कुछ धन उसके पास था वह सब उस पलड़ेपर लाकर रख दिया, परंतु तुलसीदलका पलड़ा किंचित् भी ऊपर नहीं उठा। तब साहूकारने अपना दान, धर्म, तीर्थयात्रा इत्यादिका पुण्य उस पलड़ेपर चढ़ाया तो भी उसकी तुलना नहीं हुई। यह देखकर वह साहूकार अत्यन्त चकित तथा गर्वरहित होकर श्रीनामदेवजीकी शरण आया और उनकी कृपा तथा समागमसे कृतार्थ होकर अन्तमें सद्गतिको प्राप्त हुआ। (ना० भक्तमाल छप्पई ४३)।

अतः स्पष्ट है कि 'राम'-नामकी बराबरी धन, तप, तीर्थ, दान भी नहीं कर सकते। 'राम'-नामकी महिमा सभी संतोंने सहर्ष स्वीकार की है। परमार्थके अध्यात्मपथमें सभी सिद्धों, साधकों और संतोंके समान अनुभव होते हैं। संतोंका धन केवल 'राम'-नाम ही है—

रामनाम मेरी पूँजी धनाँ। जो पूँजी मेरौ लागौ मना॥
यह पूँजी है आगम अपार। ऐसा कोई न साहूकार॥
साहकी पूँजी आवै जाई। कबहूँ आवे मूल गँवाई॥
जालौ जलै न कोई खाई। राजा दण्डे न चोर लै जाई॥
अलख निरंजन दीनदयाल। नामदेव का धन ही गोपाल॥

श्रीनामदेवजी तो यहाँतक कहते हैं कि 'राम'-नामके स्मरणसे सभी कलंक धुल जाते हैं तथा स्मरण करनेवाला पावन-पवित्र होकर मुक्ति प्राप्त करता है—

कौन कै कलंक रहो राम नाम लेत ही।
पतितपावन भये राम कहत ही॥
राम संग नामदेव यह प्रतीति पाई।
एकादशी व्रत करै काहे कूँ तीर्थ जाई॥
भणत नामदेव समुरत सकरत पाई।
राम कह जन को कौन न मुकति पाई॥

नामदेवजी कहते हैं कि—'राम'-नाम महामन्त्र है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसीलिये महादेवजीने भी भगवती पार्वतीको यही मन्त्र जपनेका उपदेश दिया—

'जय राम' महामंत्र राम महा। राम रमे राम महा ॥ टेक ॥
महादेव उपदेशी गौरी। राम-नाम मंत्र तो सुन गौरी ॥
जई मंत्र नारद धुबई पढ़ाव। संत संगत मिलै दास न गाव ॥
आदि गुरू रघुनाथ उधरणा। रावण कुम्भकरण बस करना ॥
नामों भणे राम नाम पवित्रा। राम बिना नहीं मुक्तिदाता ॥

तभी तो नामदेवजी 'राम'-नाम महामन्त्र जपनेका परामर्श देते हुए कहते हैं—

जो बोलो तो रामहि बोल। नहिं तो वदन कपाट न खोल ॥ टेक ॥
जै बोलिए तो कहिये राम। आन बकन सूँ नहीं काम ॥
राम नाम मेरे हृदय लेख। राम बिना सब फोकट देख ॥
नामदेव भणे मेरे एके नाऊ। राम नाम की मैं बली जाऊँ ॥

'राम'-नाम महामन्त्रका जप करते-करते नामदेवजी ईंटपर खड़े अपने इष्टदेव अनन्त विश्वव्यापी, घट-घटवासी विट्ठलको रामके रूपमें परिणत करके उसे रिझानेके लिये बावली वधू-जैसा सिंगार करते हैं—

मैं बऊरी मेरा राम भरतार। रचि-रचि ताकऊ करऊ सिंगारू ॥
भले निंदऊ भले निंदऊ भले निंदउ लोगु। तनुमनु राम पिआरे जोगु ॥
वाद-विवाद काहू सिउ न कीजै। रसना राम रसाइनु पीजै ॥
अब जीअ जानि ऐसौ बनिआई। मिलऊ गुणाल नीसानु बजाई ॥
उसतति निंदा करै नरकोई। नामे स्त्री रंगु भेटल सोई ॥

जिस प्रकार विषयी मनुष्य पर-नारीके प्रेममें तड़पता है, उसी प्रकार प्रभु रामके प्रति नामदेव प्रेममें तड़पते हैं। एक अन्य पदमें अपने इष्टदेवके प्रति अपनी प्रीतिकी गहनताको वे यह उदाहरण देकर व्यक्त करते हैं—

कामी पुरुष कामनी पिआरी। ऐसी नामें प्रीति मुरारी ॥

इस प्रकार भक्तश्रेष्ठ नामदेव 'राम'-नामके बिना एक घड़ी भी नहीं जीना चाहते हैं। वे कहते हैं कि मैं हाथसे काम करता हूँ, परंतु मेरा मन रामके नाममें रमा रहता है।

श्रीनामदेवको भगवान् रामके संकीर्तनके बिना एक क्षण भी चैन नहीं पड़ता था। भगवान्‌के प्रति विश्वास, निष्ठा और प्रेमकी पराकाष्ठा नामदेवमें थी, वे तो यहाँतक कहते थे कि—

जै न भजति नारायणा। तिनका मैं न करौ दरसना ॥

नामदेवजी तो केवल 'राम'-नाम जपना, सुनना चाहते थे, वे रामको ही अपना माता-पिता एवं जीवनदाता मानते थे—

राम नाम जपिवौ श्रवननि सुनिवौ।
सलिल मोह में बहि नहीं जाइवो ॥
राम माता राम पिता राम सवै जीवदाता।
भणत नामदेव छीपी। कहे पुकार गीता ॥

नामदेवजी कहते हैं कि शरीर धारण करनेका यही महत्त्व है कि 'राम'-नामका विस्मरण न हो—

राम रमे रमि राम संभारे। मैं बल ताकी छिन न बिसरै ॥
सरीर सभागा जो मोहि भावै। पार ब्रह्म का जे गुण गावै ॥
शरीर धरे को इहै बड़ाई। नामदेव राम न बीसर जाई ॥

नामदेवजीने 'राम'-नामके महत्त्वको समझा और उन्होंने 'राम'-रतनको प्राप्त भी कर लिया। उन्हींके शब्दोंमें—

राम रतन धन पाया। माया राम रतन धन पाया ॥
वस्तु अमोलक दियो है, गुरू ने माथे तिलक कराया ॥
राम नाम की भई विभूति जग में साह कहाया ॥
देत लेत और बावत् खरचत दिन दिन होत सवाया ॥
राज न् दंडे चोर न लूटे धरनी धरै न जाया ॥
ले प्रह्लाद खम्भ में बाँधे, अब तेरो कौन सहाया ॥
कहाँ तेरो राम बताओ मोहो, हाथ खडग झटकाया ॥
तो मैं मो में खडग खम्भ में व्यापि रहे रघुराया ॥
खम्भ कोरि हिरनोकुश मारे 'नामदेव' की राम सहाया ॥

भगवान्‌के चरणोंका आश्रय सब भय-शोकादिका नाशक है

तावद्भयं द्रविणगेहसुहृन्निमित्तं शोकः स्पृहा परिभवो विपुलश्च लोभः।
तावन्ममेत्यसदवग्रह आर्तिमूलं यावन्न तेऽङ्घ्रिमभयं प्रवृणीत लोकः ॥ (श्रीमद्भा० ३। ९। ६)

'जबतक पुरुष आपके अभयप्रद चरणारविन्दोंका आश्रय नहीं लेता, तभीतक उसे धन, घर और बन्धु-जनोंके कारण प्राप्त होनेवाले भय, शोक, लालसा, दीनता और अत्यन्त लोभ आदि सताते हैं और तभीतक उसे मैं-मेरेपनका दुराग्रह रहता है, जो दुःखका एकमात्र कारण है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मीराके राम

(डॉ॰ श्रीपद्माकर जगन्नाथ हरिदासजी, एम्॰ ए॰, पी-एच्॰ डी॰, बी॰ एस्-सी॰, बी॰ जी॰एल्॰, एम्॰ बी॰ बी॰ एस्॰, डी॰ टी॰ डी॰)

'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई॥' कहनेवाली श्रीकृष्णानुरागिणी भक्तिमती मीरा भक्तिके प्रवाहमें रामरसमें डूब ही गयीं। मीराबाईका रामभक्तिपरक होना इसी बातका प्रमाण है कि हमारे भक्त कवियोंकी भक्ति एकाङ्गी नहीं थी। तुलसीदासजीने भी 'कृष्ण-पदावली'का प्रणयन किया है और सूरदासजीने 'सूरसागर' तथा 'सूर-पदावली'में रामभक्ति-गीत ही नहीं, अपितु मुक्तक रामकथा प्रस्तुत की है। इसी परम्परामें मीराबाईने गिरधर गोपालके गानमें मगन रहकर रामभक्ति-गीतोंका सृजन किया है। इन रामभक्तिपरक गीतोंके कुछ वचन इस प्रकार हैं—

१-पायो जी म्हे तो राम रतन धन पायो।

२-माई री मैं तो लियो गोबिंदो मोल।

३-मेरे तो राम नाम दूसरो न कोई।
मीरा राम लगन लागी, होणी होय सो होई।

४-राणाजी म्हाँने याही बदनामी मीठी।
रामजी सूँ मैं तो बात करै छी, दुरजन लोगों ने दीठी।

५-वारी वारी हो राम हूँ वारी, तुम आज्या गली हमारी।

६-म्हाँरै घर आवो भी राम रसिया,
थाँरी साँवरी सूरत बन बसिया।

७-मैं तो तेरी सरण परी रे, रामा, ज्यूँ जाड़े ज्यूँ तार।

८-राम नाम रस पीजै, मनुआँ राम नाम रस पीजै।

९-रामकी दिवाणी, मेरो दरद नहिं जाने कोई।
शेषनाग पर सेज पिया की, किस बिध मिलना होई।
मीरा की पीर प्रभु तभी मिटैगी, बैद साँवलिया होई॥

१०-राणाजी थाँरो देसड़लो छै रंग रुडो
राम नाम की भक्ति न भावै, लोग बंसै सब कूड़ो।
मीरा के प्रभु हरि अविनासी, वर पायो छै मीरा रुडो॥

११-परम सनेही राम की नीति ओलूँ री आवे।
राम हमारे हम हैं राम के, हरि बिनु कछु न सुहावे॥

१२-मेरे प्रियतम प्यारे राम कूँ लिख भेजूँ रे पाती।
स्याम सनेसो कबहुँ न दीन्हो जानि बूझ गुझ बाती॥

१३-मेरे मन राम बसी।
तेरे कारण स्याम सुन्दर, सकल जोगाँ हाँसी।

१४-स्याम बिन दुख पावाँ सजणी
राम नाम बिनु मकुति न पावाँ, फिर चौरासी जावाँ।

१५-कुण बाँचै पाती, बिना प्रभु कुण बाँचै पाती॥

× × ×

हरि बिन जिवणो यूँ जळे रे (बाला), ज्यूँ दीपक सँग बाती॥
मने भरोसो रामको रे (बाला) डूब तिर्‌यो हाथी।

कहते हैं कि स्वजनोंसे त्रस्त मीराबाईने तुलसीदासजीको निम्नलिखित पत्र भेजा था—

'स्वस्तिश्री तुलसी गुणभूषण दूषण हरण गुसाँई।
बारहिं बार प्रणाम करहुँ, अब हरहु सोक समुदाई॥
घर के स्वजन हमारे जेते, सबन उपाधि बढ़ाई।
साधु संग अरु भजन करत मोहिं देत कलेस महाई॥
सो तो अब छूटत नहिं क्योंहूँ, लगी लगन बरियाई।
बाळपणे में मीराँ कीन्ही गिरधरलाल मिताई॥
मेरे मात तात सम तुम हो, हरि भक्तन सुखदाई।
मोकों कहाँ उचित करिबो, अब सो लिखिये समुझाई॥

और यह भी कहा जाता है कि उत्तरमें श्रीतुलसीदासजी महाराजने यह पद लिख भेजा—

जाके प्रिय न राम बैदेही।
सो छाड़िए कोटि बैरी सम जद्यपि परम सनेही॥
नाते नेह राम के मनियत सुहृद सुसेव्य जहाँ लौं।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै, बहुतक कहौं कहाँ लौं॥
तुलसी सो सब भाँति परम हित पूज्य प्रान ते प्यारो।
जासों होय सनेह राम पद एतो मतो हमारो॥

सम्भव है कि मीराबाईको रामभक्ति-पदकी रचनाकी प्रेरणा तुलसीदासजीके उक्त मन्तव्यसे प्राप्त हुई हो।

भक्तिमती मीराबाईका कहना था कि रामकी आराधनाके लिये सत्संग और हरिचर्चाको माध्यम बनाकर एवं काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि षट् रिपुओंको मनसे त्यागकर ही राम-रंगमें डूबा जा सकता है—

राम नाम रस पीजै, मनुआँ राम नाम रस पीजै।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तज कुसंग सत्संग बैठ नित हरि चर्चा सुनि लीजै ॥
काम क्रोध मद लोभ मोहकूँ बहा चित्तसे दीजै ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, ताहिके रंगमें भीजै ॥

कभी तो मीरा रामानुरागमें प्रेरित होकर कहती हैं—

'मेरे प्रियतम प्यारे राम कूँ, लिख भेजूँ रे पाती'

और फिर पत्रके गन्तव्य रामको अपने हृदयमें ही पाती हैं—

'जिणरो पियाँ परदेस बस्याँरी, लिख लिख भेज्याँ पाती ।
म्हाँरा पियाँ म्हारे हीयड़े बसताँ, णा आवाँ णा जाती ।'

अपने श्रीरामका आह्वान करते हुए प्रेम-दीवानी मीरा कहती हैं—

वारी वारी हो राम हूँ वारी, तुम आज्या गली हमारी ।
तुम देख्याँ बिन कल न पड़त है, जोऊँ बाट तुम्हारी ॥
कूण सखी सूँ तुम रंग राते, हम सूँ अधिक पियारी ।
किरपाकर मोहि दरसन दीज्यो, सब तकसीर बिसारी ॥

× × ×

मेरे प्रियतम प्यारे राम कूँ लिख भेजूँ रे पाती ।
स्याम सनेसो कबहुँ न दीन्हो, जानि बुझ गुझ बाती ।
डगर बुहारूँ पंथ निहारूँ, जोइ जोइ अखियाँ राती ।
राति दिवस मोहि कल न पड़त है, हीयो फटत मेरो छाती ।
मीरा के प्रभु कब र मिलोगे, पूरब जनम का साथी ॥

अपने सर्वस्व श्रीरामके नाममें पगी भक्तिपरायणा मीराँ भगवन्नामके निरन्तर जप करनेके लिये सबको सचेष्ट करती हैं और भगवन्नामकी महिमा बताते हुए कहती हैं—

मेरो मन रामहि राम रटै रे ॥
रामनाम जप लीजै प्राणी, कोटिक पाप कटै रे ।
जनम जनम के खत जु पुराने, नामहि लेत फटै रे ॥
कनक कटोरे इम्रत भरियो, पीवत कौन नटै रे ।
मीराँ कहे प्रभु हरि अबिनासी, तन मन ताहि पटै रे ॥

अपने प्रियतम, आराध्य श्रीरामके दर्शन एवं मिलनकी आतुरतासे व्यथित मीरा चाहती हैं कि किसी दिन इनका राम इन्हें याद करे—***'कोई दिन याद करो रमता राम अतीत'*** और उपालम्भ देते हुए मीरा कहती हैं कि यह नारी-स्वभावकी विशिष्टता है कि प्रियतम अपनी ओरसे आकर्षण भले ही कम करे, उसके प्रति नारी-मनके खिंचावमें अभिवृद्धि होती ही जाती है—

'रमईया मेरे तोही सूँ लागी नेह ।
लगी प्रीत जिन तोड़ैं रे बाला, अधिकौ कीजै नेह ॥

क्योंकि इनका रामसे नवीन परिचय नहीं, जन्म-जन्मका साथ है—

डगर बुहारूँ पंथ निहारूँ, जोइ जोइ अखियाँ राती ।

× × ×

मीरा के प्रभु कब र मिलोगे, पूरब जनम का साथी ॥

इसीलिये श्रीराम-नामकी मधुरिमामें डूबकर कृष्णानुरागिणी मीराकी लेखनी भी एक बार कह उठी—

'मेरे तो राम नाम दूसरो न कोई ।'

रामकी लीला राम ही जानें

रामकी लीला राम ही जानें और न जाने कोय ॥
जैसी करनी, वैसी भरनी तस काटे जस बोय ।
राम बिसारेका फल संसृति करमन गति क्यों रोय ॥
राम-भगतिकी महिमा अमित है अद्भुत अचरज होय ।
विषका प्याला राना भेजा पीवत अमृत होय ॥
कितने पाषाण समुद्र तराये एक छू नारी होय ।
गणिका, अजामिल, अधम पातकीकी दुर्लभ गति होय ॥
भगतकी खातिर मुरली तजिके कृष्ण धनुर्धर होय ।
भावबस्य शरणागत-वत्सल नहीं राम-सम कोय ॥
सोई जाने जेहि राम जनावैं कृपा-दृष्टि जब होय ।
'रमण' राम-सुमिरनमें रम जा राम-भरोसे होय ॥

—श्रीरमणजी भजनानन्दी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामभक्त एक अंग्रेज कमिश्नर

[न्यायकी कुछ अनोखी घटनाएँ]

(श्रीअम्बादास सी॰, बागूल)

सन् १९३०में मेरठमें एक अंग्रेज कमिश्नर थे श्री पी॰ डब्ल्यू॰ मार्श। मार्श साहब एक अंग्रेज-परिवारमें जन्म लेनेपर भी भारत, भगवान् श्रीराम एवं रामायणके अनन्य भक्त बन गये थे। भगवान् श्रीरामपर उनकी अत्यन्त श्रद्धा थी और वे रामजीको ही अपना सर्वस्व समझते थे। उनकी न्यायप्रियताकी धाक दूर-दूरतक जम गयी थी।

मार्श साहबने मेरठ-स्थित किसी अंग्रेज-परिवारमें जन्म लिया था, किंतु अल्पायुमें ही उनके माता-पिता उन्हें छोड़कर मृत्युको प्राप्त हो गये थे। बालक मार्शका लालन-पालन मेरठ जिलेकी बागपत तहसीलके एक मीण जाट-परिवारके हाथों हुआ। उस परिवारकी महिलाने उस बालकको अपने सगे बेटेकी तरह अत्यन्त लाड़-प्यारसे पाला। गाँवकी पाठशालामें ही हिन्दी, संस्कृत तथा उर्दूकी शिक्षा दिलायी। बादमें मेरठ जाकर उन्होंने अंग्रेजीकी शिक्षा प्राप्त की।

मार्श साहब पढ़ने-लिखनेमें प्रारम्भसे ही अत्यन्त तेज थे। अतः प्रत्येक परीक्षा उन्होंने प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण की, अन्तमें एक दिन ऐसा हुआ कि आई॰ सी॰ एस्॰ की उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेनेके बाद वे ब्रिटिश सरकारकी सेवामें कार्यरत हुए। कुछ ही दिनोंमें मेरठमें उन्हें जिलाधीशसे कमिश्नरके पदपर नियुक्त कर दिया गया।

जिलाधीश तथा कमिश्नरके पदपर पहुँचनेपर भी मार्श साहब अपनी जाटनी माताके प्रति अत्यन्त श्रद्धा-भक्ति रखते थे। वे समय निकालकर गाँव जाकर जाटनीके चरण-स्पर्श करते तथा गाँवके प्रत्येक व्यक्तिके घर जाकर उसके दुःख-सुखकी खबर लेते तथा हर सम्भव सहायताके लिये तत्पर रहते। यहाँ उनकी न्यायप्रियताके कुछ प्रसंग दिये जा रहे हैं—

(१)

रामायणकी चौपाईका उत्तर

एक दिन उनकी अदालतमें एक पटवारीके विरुद्ध मुकदमा आया कि उसने रिश्वत लेकर किसीकी जमीन दूसरेके नाम चढ़ा दी है। पटवारी अत्यन्त चालाक था तथा यह जानता था कि मार्श साहब भगवान् राम और रामायणके अनन्य भक्त हैं। अतः उसने अपनेको रामभक्त प्रदर्शित कर उन्हें प्रभावित करनेके लिये अदालतमें रामायणकी चौपाई सुनायी—

दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी॥

मार्श साहब इस परिणामपर पहुँच चुके थे कि पटवारी अवश्य ही अपराधी है, अतः उन्होंने तुरंत चौपाई सुनाकर उत्तर दिया—

जौं नहिं दंड करौं खल तोरा। भ्रष्ट होइ श्रुतिमारग मोरा॥

पटवारी उनके हृदयकी बात समझ गया तथा दण्डसे नहीं बच पाया।

मार्श साहबके न्याय प्रदान करनेकी सूझ-बूझकी घटनाएँ उस समय न केवल मेरठ अपितु देश भरमें फैल गयी थी। वे अत्यन्त कुशलताके साथ पूर्ण न्याय प्रदान करनेका प्रयास करते।

(२)

बागका मालिक कौन ?

एक दिन किसी गाँवकी एक गरीब विधवा उनके पास आकर विलाप करने लगी कि मेरे एक पुश्तैनी बागको जमींदारने पटवारीसे मिलकर अपने नाम लिखा लिया है। मार्श साहबने उसे सान्त्वना देते हुए कहा कि 'मैं अमुक दिन तुम्हारे गाँव आकर बाग तुम्हें दिलवा दूँगा, तनिक भी चिन्ता न करो, किंतु यह बात किसीको बताना नहीं।'

मार्श साहब एक दिन प्रातः गाँवमें जा पहुँचे तथा बागमें पहुँचकर अपने चपरासीसे कहा कि तुम मुझे इस वृक्षके साथ रस्सीसे बाँध दो। चपरासीने वैसा ही किया। थोड़ी देरमें गाँव भरमें खबर फैल गयी कि साहब वृक्षसे बँधे हुए हैं। देखते-देखते भीड़ लग गयी। सारा गाँव उनकी सहानुभूतिमें उमड़ पड़ा तथा गाँववालोंने रस्सी खोलकर उन्हें मुक्त कर दिया।

गाँवके प्रधानने पूछा कि 'हुजूर! आपको किसने बाँधनेका साहस किया ?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने उत्तर दिया—'बागके मालिकने मुझे बँधवाया है।'

जिस जमींदारने पटवारीको रिश्वत देकर कुछ ही दिन पहले बाग अपने नाम करा दिया था, वह भी वहाँ उपस्थित था। मार्शकी बात सुनकर वह डर गया। उसने कहा—'हुजूर! यह बाग तो अमुक वृद्धाका है।'

मार्श साहबने पटवारीको बुलाकर कागजात लानेको कहा और पूछा कि वह बाग किसका है? उसने भयसे थर-थर काँपते हुए सारे कागजात उनके सम्मुख रख दिये। उन्होंने कागज देखकर कहा—यहाँ तो बाग जमींदारके नामपर चढ़ाया है। क्या यह जमींदारका है?

पास खड़े जमींदारने कहा—हुजूर! मैंने तो पहले ही कह दिया था कि यह मेरा नहीं है।

साहबने जैसे ही पटवारीकी ओर देखा कि वह और भी थर-थर काँप उठा। उसने उनके पैरोंपर गिरकर स्वीकार कर लिया कि बाग तो वृद्धाका ही है, किंतु मैंने रुपये लेकर उसे जमींदारके नाम चढ़ा दिया था।

(३)

गरीब मालिनका घिया

एक दिन एक गरीब मालिन सिरपर सब्जी रखे इसलिये बेचने जा रही थी कि सब्जी बेचकर पैसे जब हो जायँगे, तब बीमार बच्चेके लिये दवा लाऊँगी। उसके पास बच्चेकी दवाके लिये पैसे नहीं थे। वह जैसे ही मार्श साहबकी कोठीके सामनेसे गुजरी कि कोठीके चपरासीने टोकरेसे एक घिया निकाल लिया। पैसे माँगनेपर झिड़क दिया और कहा कि घिया बेचकर लौटना तब पैसे ले जाना।

मालिनका हृदय बच्चेकी बीमारीसे वैसे ही पीड़ित था। अतः वह क्रोधमें बड़बड़ाती हुई ज्यों ही आगे बढ़ी, त्यों ही मार्श साहबकी कार उधरसे आ निकली। उन्होंने मालिनको शोर मचाते देखा तो गाड़ी रोककर पूछा—'माँ! क्या बात है? क्यों परेशान हो?'

मालिनने कहा—'साहब! मेरी बोहनी भी नहीं हुई और मेरा बच्चा बीमार है। उसकी दवाके लिये घिये बेचने निकली थी कि इस कोठीके चपरासीने बिना पैसा दिये घिया ले लिया और कहता है कि घिया बेचकर जब उधरसे लौटना तब पैसे ले लेना।'

यह सुनकर मार्श साहब क्रोधसे तमतमा उठे। वे तुरंत अंदर गये और चपरासीको डाँटा। क्या गरीबोंको इस प्रकार लूटते शर्म नहीं आती? उसने कहा—'मैंने तो इतना ही कहा था कि जितनेका तेरा एक घिया बिके मुझसे उतने पैसे वापसीमें ले जाना।'

'तो मैं उसे घियेके पचास रुपये देता हूँ। और तू अपने घियेके पचास रुपये दे।' उन्होंने डाँट लगायी।

अन्तमें मार्श साहबने सौ रुपयेका एक नोट मालिनको देते हुए चपरासीकी गुस्ताखीकी क्षमा माँग ली। साथ ही चपरासीको भविष्यमें ऐसा न करनेकी चेतावनी दी।

इस प्रकार सच्चे न्यायकी अनेक अनोखी घटनाएँ मार्श साहबके साथ जुड़ी हुई हैं। मार्श साहब व्यक्तिगत रूपसे अत्यन्त पवित्र एवं विनम्र व्यक्ति थे। जीवनभर मांस, शराब एवं रिश्वतको उन्होंने हाथतक नहीं लगाया। हिन्दू-संस्कृतिको वे महानतम संस्कृति और रामको अपना आराध्य देव मानते थे।

भक्त रामदास

(श्रीलक्ष्मणरावजी जोशी, एम्० ए०)

आंध्र प्रदेशके खमम् जिलेमें भद्राचलम् नामका एक छोटा-सा गाँव है। वहाँ १६ वीं सदीमें राममन्दिरकी स्थापना हुई। यह गोदावरी नदीके किनारे बसा हुआ है। इस मन्दिरकी स्थापनासे सम्बन्धित एक भक्तगाथा प्रसिद्ध है, जो इस प्रकार है—

मुसलमानोंका शासन था। भद्राचलम् गाँवमें रामदास नामक एक रामभक्त रहता था। भगवान् रामपर विश्वास रखकर सब कुछ कार्य करता था। कुछ समय बाद वह उसी गाँवका तहसीलदार बना। प्रतिवर्ष मालगुजारी वसूल होती थी। वह ईमानदारीसे वसूला हुआ धन सरकारी खजानेमें जमा करता था। बादशाह भी उसके कार्यपर संतुष्ट था। स्वयं बादशाह भी भगवद् (अल्ला)-भक्त था। पाँच बार नमाज पढ़ता। रोजा, दान-धर्म करता था। दयालु था। एक वर्षतक उसी प्रकार तहसीलका पैसा जमा हुआ। तदनन्तर एक दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकस्मात् रामदासके मनमें राममन्दिर बनवानेकी इच्छा जाग्रत् हुई। तदनुसार उस प्रेरणासे प्रेरित होकर उसने राम-मन्दिरका काम प्रारम्भ करवा दिया। धन तो उसके पास था नहीं, किंतु उसने लोगोंसे जमीनका वसूल किया हुआ जो सरकारी धन था, वह सारा-का-सारा धन राममन्दिरके निर्माणमें खर्च कर दिया। रामदासको यह विश्वास था कि राजा भी ऐसे धर्मके कार्यमें मना नहीं करेगा; बल्कि सुनकर खुश ही होगा, किंतु दुर्भाग्यसे राजाको यह बात बादमें मालूम हुई कि इस वर्षकी मालगुजारी तहसीलदारने खजानेमें जमा नहीं की और उसका दुरुपयोग करके स्वयं खर्च कर लिया। सरकारी धनसे राममन्दिर बनवानेकी क्या जरूरत थी ? यह सोचकर राजाको क्रोध आया। उन्होंने सिपाहियोंको भेजकर तहसीलदारको गिरफ्तार करके अपने पास बुलाया।

भक्त रामदासको बड़ा दुःख हुआ। राजाने उसे बुरा-भला कहा और पूछा—'यह किसका पैसा है ? किसकी अनुमति लेकर तुमने यह धन खर्च किया ? यह तो जनताके प्रति अन्याय है। जनताके धनको तुमने लूटा है। तुम चोर, विश्वासघातक हो।' इसी प्रकारसे अनेक कठोर शब्द कहे और कहा कि यदि तुमने सात दिनके अंदर सरकारी धन नहीं लौटा दिया तो तुम्हें फाँसीकी सजा दे दी जायगी। तबतक तुम जेलमें बंदी बन कर रहोगे।

भक्त रामदासने राजासे कहा—'सरकार ! मैंने तो यह धन अपने लिये खर्च नहीं किया। जनताके लिये किया है। अब तो मेरे राम ही मेरी रक्षा करेंगे। आपका धन आपको स्वयं प्रभु राम ही देंगे।' ऐसा उत्तर सुनकर राजा और अधिक क्रुद्ध हो उठा और कहा—'ठीक है देखूँगा, तुम्हारा राम तुम्हारी रक्षा कैसे करता है।'

तहसीलदारको जेलमें बंद कर दिया गया। रामदासको तो राम-नामका अवलम्बन था, वह जेलमें रात-दिन श्रीराम-भजन करने लगा। खाना-पीना भूल गया। 'रामके अतिरिक्त कोई मेरी सहायता नहीं करेगा' ऐसा उसका पूर्ण विश्वास था। वह कभी-कभी प्रभु रामपर गुस्सा भी हो जाता और कहता—'तुम झूठे हो, तुम्हारे लिये मैंने मन्दिर बनवाया, तुम्हारे लिये ही सारा जीवन बिताया। तुम्हारे ही कारण मैंने अपनी प्रतिष्ठा खोयी।' ऐसा कहते-कहते वह दुःखी हो सिर पटकने लगता। कभी रोने लगता, कभी भूखा रह जाता और भगवान्के चरणोंपर गिरकर कहता—मैं अपने प्राणोंका त्याग कर दूँगा। भगवान् ! मेरी रक्षा करो। कभी वह भजन गाता—

श्रीराम जय राम जय जय राम। रघुपति राघव राजाराम।
पतित पावन सीताराम।

इस प्रकार भजन गाते-गाते, सोते, बैठते, भगवान्का स्मरण करते वह जेलका कष्टमय जीवन बिता रहा था। अवधिके छः दिन पूरे हुए, किंतु भगवान् उसको दिखायी नहीं दिये। शरीर बहुत क्षीण हो गया। ऐसी अवस्थामें नींद कैसे लगती। राम-राम कहता रहा। रात हो आयी।

छठी रातको ठीक १२ बजे बादशाहके महलमें दो युवक पहुँचे। बादशाह उस समय गहरी नींदमें थे। युवकोंने उन्हें उठाया। बादशाह घबरा गये। चिल्लाये ! युवकोंने कहा—बादशाह ! डरो मत। हम चोर नहीं हैं, हम तो रामदासका कर्जा चुकाने आये हैं। यह लो सोनेकी मोहरें। बादशाहने कहा—'तुम कौन हो ?' उन्होंने कहा—'हम दोनों भाई हैं। मेरा नाम रामोजी और मेरे भाईका नाम लक्ष्मोजी है'—ऐसा कहकर उन्होंने मोहरोंकी थैली बादशाहको दे दी। राजाने थैली खोलकर देखा तो मोहरें असली थीं। राजाको आश्चर्य हुआ। युवकोंने राजासे रुपये-प्राप्तिकी रसीद माँगी। राजाने मन्त्रीद्वारा रसीद दिलायी। रसीद लेकर वे दोनों युवक जब जाने लगे तो पहरेदारोंने उन्हें पकड़ना चाहा, किंतु राजाने उन्हें छोड़ देनेकी आज्ञा दी।' राजाको यह घटना स्वप्न-जैसी मालूम हुई। प्रातःकाल राजाने उन मोहरोंको देखा। सब ठीक थे। बादशाहने मन्त्रीको आज्ञा दी कि 'रामदासको फाँसी न दें, उसे छोड़ दिया जाय।'

इधर रामदास प्रातःकाल उठा। उसे मालूम था कि आज फाँसी मिलनेवाली है। एक बार फिर अपने श्रीरामपर क्रोध आया। भगवान्से प्रार्थना करने लगा—'भगवन् ! जो कुछ मैंने किया तुम्हारे लिये किया, फिर भी मैं समाज तथा राजाके सामने चोर, धोखेबाज प्रमाणित हुआ। मैंने अपने परिवारको भिखारी बनाया। फिर तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो यही हो, किंतु मैं तुम्हें छोड़कर अन्य किसी दूसरेकी शरणमें नहीं जाऊँगा। प्यार करो या ठुकरा दो।' ऐसा कहते हुए वह सिर पटकने लगा। उसे रुलायी आ गयी, राम-राम कहते हुए आँसू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहाने लगा।

उसी समय अचानक राजाके चार सिपाही वहाँ आये और उन्होंने रामदासको ससम्मान ले जाकर बादशाहके सामने उपस्थित कर दिया। बादशाहने रातकी घटना सुनायी और रामदास तहसीलदारसे माफी माँगी और कहा—'तुम्हारे द्वारा खर्च किया हुआ धन हमें रातमें रामोजी, लक्ष्मोजी नामक युवक दे गये हैं और उन्होंने तुम्हें मुक्त करनेको कहा है। हम तुम्हारी अनन्य रामभक्ति देखकर बहुत प्रसन्न हुए। हमने तुम्हें बहुत कष्ट दिया, जो बातें कहीं उसके लिये हमें क्षमा करो। हम यह धन भी तुम्हें ही देते हैं। अब तुम इस इलाकेमें रामका सुन्दर मन्दिर बनाओ। ताकि हमारी जनता तुम्हारा स्मरण करे एवं गुण गाये।' बादशाहकी बात सुनकर रामदास आश्चर्यमें पड़ गये। उन्हें भी पश्चात्ताप हुआ कि उन्होंने अपने रामजीको क्या-क्या नहीं कहा था।

तदनन्तर रामदासने बादशाहसे दिये हुए उस धनसे उसी भद्राचलम् गाँवमें गोदावरीके किनारे एक सुन्दर राममन्दिर बनवाया। जो आज भी वहाँ विद्यमान है। प्रतिवर्ष चैत्र रामनवमीको वहाँ बहुत बड़ा मेला लगता है। भक्त श्रीरामका दर्शन करते हैं। भगवान् श्रीराम भक्तोंके मनोरथोंको पूर्ण करते ही हैं, साथ ही उन्हें अपनी कल्याणकारिणी अविचल भक्ति भी प्रदान करते हैं।

ऐसे राम दीन-हितकारी

ऐसे राम दीन-हितकारी।
अतिकोमल करुनानिधान बिनु कारन पर-उपकारी॥
साधन-हीन दीन निज अघ-बस, सिला भई मुनि-नारी।
गृहतें गवनि परसि पद पावन घोर सापतें तारी॥
हिंसारत निषाद तामस बपु, पसु-समान बनचारी।
भेंट्यो हृदय लगाइ प्रेमबस, नहिं कुल जाति बिचारी॥
जद्यपि द्रोह कियो सुरपति-सुत, कहि न जाय अति भारी।
सकल लोक अवलोकि सोकहत, सरन गये भय टारी॥
बिहँग जोनि आमिष अहारपर, गीध कौन ब्रतधारी।
जनक-समान क्रिया ताकी निज कर सब भाँति सँवारी॥
अधम जाति सबरी जोषित जड़, लोक-बेद तें न्यारी।
जानि प्रीति, दै दरस कृपानिधि, सोउ रघुनाथ उधारी॥
कपि सुग्रीव बंधु-भय-ब्याकुल, आयो सरन पुकारी।
सहि न सके दारुन दुख जनके, हत्यो बालि, सहि गारी॥
रिपुको अनुज बिभीषन निसिचर, कौन भजन अधिकारी।
सरन गये आगे ह्वै लीन्ह्यों भेंट्यो भुजा पसारी॥
असुभ होइ जिन्हके सुमिरे ते बानर रीछ बिकारी।
बेद-बिदित पावन किये ते सब, महिमा नाथ! तुम्हारी॥
कहँ लगि कहौं अगनित जिन्हकी तुम बिपति निवारी।
कलिमल-ग्रसित दास-तुलसी पर, काहे कृपा बिसारी?॥

(विनय-पत्रिका १६६)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar